Paper : BC-201 Business Laws **Revised by : Parveen Khurana**

Lesson No : 8

वस्तु विक्रय अधिनियम 1930
(Sales of Goods Act, 1930)

पाठ की संरचना (Structure)

1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objective)
3. विषय का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Contents)
    3.1 परिभाषाएँ
    3.2 वस्तु विक्रय अनुबन्ध का निर्माण
        3.2.1 बिक्री तथा बिक्री के ठहराव में अन्तर
        3.2.2 विक्रय और एजेन्सी में अन्तर
        3.2.3 वैध विक्रय के आवश्यक तत्त्व
        3.2.4 विक्रय अनुबन्ध अन्य प्रकार के अनुबन्धों से भिन्न
    3.3 विक्रय के अनुबन्ध की विषय वस्तु
    3.4 माल का नष्ट होना
    3.5 मूल्य या कीमत
    3.6 मूल्य के निर्धारण के ढंग
    3.7 शर्तें तथा आश्वासन
        3.7.1 शर्त तथा आश्वासन के प्रकार
        3.7.2 नमूने द्वारा बिक्री की परिभाषा
        3.7.3 वस्तु के स्वामित्व का हस्तांतरण
    3.8 स्वामित्व के हस्तांतरण के नियम
        3.8.1 अधिकार का हस्तांतरण
        3.8.2 विक्रय अनुबन्ध का निष्पादन
        3.8.3 विक्रेता तथा क्रेता के कर्त्तव्य
        3.8.4 सुपुर्दगी के प्रकार
        3.8.5 सुपुर्दगी सम्बन्धी नियम
        3.8.6 क्रेता द्वारा माल की स्वीकृति
        3.8.7 अदत्त विक्रेता के माल के विरुद्ध अधिकार
    3.9 अदत्त विक्रेता के अधिकार
    3.10 नीलाम द्वारा विक्रय
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के लिए प्रश्न (Sample Questions)

1. परिचय (Introduction)

वर्तमान युग व्यापार का युग है। आज के व्यापार के युग में करोड़ों व्यवहार प्रतिदिन किए जाते हैं तथा उनका सफलतापूर्वक पूरा किया जाना व्यापार की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिए समाज के विभिन्न वर्गों को वस्तु विक्रय अनुबन्ध के मुख्य प्रावधानों की जानकारी होना आवश्यक है जोकि इस अधिनियम के अन्तर्गत दी गई है। 1930 में पहले यह अधिनियम अनुबन्ध अधिनियम का हिस्सा था परन्तु व्यवसाय की बढ़ती जटिलताओं के कारण इसे एक विस्तृत रूप में एक अलग अधिनियम बना दिया गया। सन् 1930 में एक नया अधिनियम भारतीय वस्तु विक्रय अधिनियम 1930 स्थापित किया गया। सन् 1963 में एक संशोधन द्वारा शब्द 'भारतीय' को भी हटा दिया गया। अब इस अधिनियम का नाम 'वस्तु विक्रय अधिनियम' है। यह अधिनियम वस्तु विक्रय से जुड़े समस्त पक्षकारों के अधिकारों व हितों की रक्षा करता है तथा उन्हें लागू करवाने में सभी पक्षकारों की सहायता करता है।

2. उद्देश्य (Objectives)

इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य पाठकों को वस्तु विक्रय अधिनियम 1930 के सभी महत्त्वपूर्ण प्रावधानों से परिचित करवाना है। इसमें धारा 2 में दी गई आधारभूत परिभाषाओं से पाठकों को परिचित करवाना अध्याय के मुख्य उद्देश्यों में से एक है। यह अध्याय पाठकों को विक्रय, विक्रय अनुबन्ध की स्थापना, लक्षण आदि के बारे में जानकारी उपलब्ध करवाता है। इसी सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण अवधारणाओं, शर्तो तथा आश्वासनों से जुड़े तथ्य के बारे में यह पाठकों को आवश्यक सूचनाएँ प्रदान करता है। क्रेता तथा विक्रेता के बीच स्वामित्व तथा अधिकार का हस्तांतरण द्वारा विक्रय अनुबन्ध का निष्पादन करते समय सुपुर्दगी तथा स्थान के महत्त्व की जानकारी पाठकों को प्रदान करना है। विक्रेता द्वारा अनुबन्ध भंग किए जाने पर क्रेता के अधिकारों की भी यह पाठकों को जानकारी प्रदान करता है। यदि एक क्रेता विक्रेता को भुगतान नहीं करता तो ऐसी स्थिति में एक अदत्त विक्रेता की स्थिति तथा अधिकारों की समस्त जानकारी भी यह पाठकों को उपलब्ध करवाता है। इसी प्रकार एक विशेष प्रकार का विक्रय जोकि नीलामी द्वारा विक्रय कहलाता है इसकी जानकारी भी यह पाठकों को उपलब्ध करवाता है।

3. विषय का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Contents)

वस्तु-विक्रय अधिनियम वस्तु अनुबन्ध पर लागू होता है, यह एक विशिष्ट प्रकार का अनुबन्ध है। 1930 से पूर्व वस्तु विक्रय अनुबन्ध से सम्बन्धित बातें भारतीय अनुबन्ध की धारा 76 से 123 में शामिल थी। ये सब व्यवस्थाएँ व्यापारिक परिस्थितियों में बदलाव के कारण पर्याप्त नहीं थी। इस प्रकार 1930 में एक नया अधिनियम पारित किया गया था। 1 जुलाई, 1930 से यह अधिनियम लागू हुआ। इस अधिनियम ने विक्रय और विक्रय के ठहराव के अन्तर को काफी स्पष्ट कर दिया है, स्वामित्व के हस्तान्तरण के नियमों को भी ठीक प्रकार से समझाया गया है, नीलाम द्वारा बिक्री, वाहक को सुपुर्दगी, रास्ते में सामान रोकने सम्बन्धी सभी नियम एवं शर्ते तथा आश्वासन के सम्बन्ध में भी नियमों को बतलाया गया है। वस्तु विक्रय अधिनियम की मुख्य परिभाषाएँ इस प्रकार से हैं -

3.1 परिभाषाएँ (Definitions)

1. **क्रेता (Buyer) :** क्रेता से तात्पर्य उस व्यक्ति से है, जो माल खरीदता है अथवा ऐसा ठहराव करता है।

2. **सुपुर्दगी (Delivery) :** एक व्यक्ति द्वारा अपनी इच्छा से दूसरे व्यक्ति को माल का हस्तातंरण ही सुपुर्दगी कहलाता है।

3. **सुपुर्दगी योग्य दशा (Deliverable State) :** माल को उस समय सुपुर्दगी योग्य दशा में कहते हैं, जब क्रेता अनुबन्ध अधीन उसकी सुपुर्दगी लेने के लिए बाध्य हो।

4. **माल (Goods) :** वस्तु से तात्पर्य प्रत्येक प्रकार की चल सम्पत्ति से है तथा इसमें स्टॉक एवं अंश, खड़ी फसल, घास और वस्तुएँ, जो जमीन से जुड़ी अथवा जमीन का ही भाग हों, शामिल किया जाता है।

5. **भावी माल (Future Goods) :** भावी माल का अभिप्राय ऐसे माल से है जो बिक्री का अनुबन्ध होने के बाद उत्पादित या प्राप्त किया जाता है।

6. **माल के अधिकार सम्बन्धी प्रपत्र (Documents of Title to Goods) :** धारा 2(5) के अनुसार प्रपत्रों में निम्नलिखित शामिल होते हैं - जहाजी बिल्टी, डाक वारण्ट, माल गोदाम के अधिकार का प्रमाण पत्र, रेलवे रसीद, वारण्ट अथवा माल की सुपुर्दगी का आदेश और कोई भी दूसरा प्रपत्र जो व्यापार की सामान्य प्रगति में, माल के अधिकार के प्रमाण में अथवा माल के नियन्त्रण में प्रयोग किये जाते हैं।

7. **दिवालिया (Insolvent) :** धारा 2(8) के अनुसार वह व्यक्ति दिवालिया कहा जाता है, जिसने व्यापार की साधारण प्रगति में अपने ऋण का भुगतान बन्द कर दिया हो, अथवा जो ऋण देय होने पर उसका भुगतान नहीं कर सकता है, चाहे उसने दिवालिया होने का कोई काम किया हो या नहीं।

8. **व्यापारिक एजेण्ट (Mercantile Agent) :** धारा 2(9) के अनुसार व्यापारिक एजेण्ट से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जिसे व्यापार की साधारण प्रगति में एजेण्ट की हैसियत से माल बेचने, खरीदने अथवा रुपया वसूल करने का अधिकार है।

9. **दोष (Fault) :** दोष से तात्पर्य दोषपूर्ण कार्य या त्रुटि से है।

10. **कीमत (Price) :** कीमत का तात्पर्य वस्तु-विक्रय के लिए मौद्रिक प्रतिफल से है।

11. **सम्पत्ति (Property) :** सम्पत्ति का अर्थ माल की सामान्य सम्पत्ति से है, केवल विशेष सम्पत्ति से नहीं। धारा 2(11)

12. **माल की किस्म (Quality of Goods) :** धारा 2(12) में माल की किस्म में उसकी दशा या स्थिति शामिल होती है।

13. **विक्रेता (Seller) :** धारा 2(13) के अनुसार विक्रेता से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो माल को बेचता है अथवा बेचने का ठहराव करता है।

3.2 वस्तु-विक्रय अनुबन्ध का निर्माण (Formation of the Contract of Sale of Goods)

(धारा 4 से 10 तक)

विक्रय अनुबन्ध (Contract of Sale) : धारा 4(1) के अनुसार विक्रय अनुबन्ध वह अनुबन्ध है, जिसके द्वारा विक्रेता एक निश्चित मूल्य के बदले क्रेता को, माल का स्वामित्व हस्तान्तरित करता है अथवा ऐसा ठहराव करता है। विक्रय अनुबन्ध पूर्ण अथवा शर्त वाला हो सकता है। विक्रय अनुबन्ध शर्त

वाला तब होता है जब क्रेता वस्तु को पसन्द (Approval) पर ले जाता है और जब वह पसन्द कर लेता है तो अनुबन्ध पूर्ण हो जाता है।

बिक्री का ठहराव (Agreement of Sell) : जब बिक्री का अनुबन्ध पूरा होना बाकी रहता है, तात्पर्य माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण अभी नहीं हुआ वरना भविष्य में होना है अथवा कुछ शर्तें पूरी होनी है तो इसे बिक्री का ठहराव कहते हैं।

3.2.1 बिक्री और बिक्री के ठहराव में अन्तर

1. **स्वामित्व (Ownership) :** अधिनियम के अनुसार, "बिक्री की दशा में माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण क्रेता को हो जाता है जबकि बिक्री के ठहराव में माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण अनुबन्ध के समय क्रेता को नहीं होता। विक्रेता ही माल का स्वामी रहता है जब तक यह ठहराव बिक्री में बदल न जाए।

2. **अधिकार (Right) :** बिक्री की दशा में माल पर पूर्ण अधिकार क्रेता का होता है परन्तु जबकि बिक्री के ठहराव माल पर अधिकार क्रेता का न होकर विक्रेता का होता है।

3. **जोखिम (Risks) :** विक्रय में माल की हानि या जोखिम क्रेता पर ही होती है चाहे माल विक्रेता के पास ही क्यों न हो। विक्रय ठहराव में जोखिम विक्रेता को ही सहन करनी पड़ती है।

4. **विनिमय (Exchange) :** एक बिक्री का पूरा हुआ अनुबन्ध होता है जबकि बिक्री का ठहराव एक अधूरा अनुबन्ध होता है जो अभी पूरा होना है।

5. **क्रेता अथवा विक्रेता का दिवालिया होना (Insolveacy of Buyer or Seller) :** विक्रय में जब माल की सुपुर्दगी देने के पहले ही विक्रेता दिवालिया हो जाता है, तो क्रेता उसके आफीशियल रिसिवर से माल की सुपुर्दगी ले सकता है। परन्तु विक्रय ठहराव की दशा में क्रेता केवल अपने अंश के अनुसार लाभांश का दावा कर सकता है।

6. **निष्पादन (Adoption) :** विक्रय का अनुबन्ध पूर्ण एवं शर्त रहित होता है। जबकि विक्रय के ठहराव का निष्पादन शर्त के साथ भविष्य में होता है।

3.2.2 विक्रय और एजेन्सी में अन्तर (Difference between Sale and Agency)

विक्रय में विक्रेता माल का पूर्ण स्वामित्व हमेशा के लिए क्रेता को सौंप देता है किन्तु एजेन्सी में एजेण्ट को अपने प्रधान के माल का केवल अधिकार ही प्राप्त होता है स्वामित्व नहीं। एजेण्ट का एक प्रतिनिधि होता है और प्रधान के आदेशानुसार वह काम करता है।

3.2.3 वैध विक्रय के आवश्यक तत्त्व (Essential Elements of Valid Sale)

वस्तु विक्रय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 3 से 6 के अनुसार एक वैध वस्तु-विक्रय अधिनियम में निम्नलिखित बातें होना आवश्यक है :

(1) दोनों पक्षों में अनुबन्ध करने की योग्यता होनी चाहिए।

(2) दोनों पक्षों में सहमति होनी चाहिए।

(3) विक्रय अनुबन्ध में माल होना चाहिए।

(4) अनुबन्ध में माल का हस्तान्तरण मूल्य के बदले विक्रेता से क्रेता को होना चाहिए।

(5) क्रेता और विक्रेता दोनों अलग-अलग व्यक्ति होने चाहिए।

3.2.4 विक्रय अनुबन्ध अन्य प्रकार के अनुबन्धों से भिन्न (Contract of Sale Distinguish from other Classes of Contracts) :

विक्रय अनुबन्ध में धारा 4 के अन्तर्गत दिये गए सभी लक्षणों का होना आवश्यक होता है। यदि इसमें इनमें से कोई भी लक्षण विद्यमान नहीं होता तो यह उसे विक्रय से अलग कर देता है। विक्रय और उससे मिलते-जुलते हुए शब्दों में अन्तर होता है जिन्हें यहाँ वर्णित किया गया है -

1. **विक्रय तथा वस्तु विनिमय में अन्तर (Sale Vs. Barter System) :** जब एक वस्तु के बदले में वस्तु दी जाती है तो उसे वस्तु विनिमय कहा जाता है जबकि विक्रय के अन्तर्गत प्रतिफल का मुद्रा के रूप में होना अनिवार्य होता है किन्तु यदि सम्पत्ति अथवा माल के हस्तान्तरण पर कुछ प्रतिफल मुद्रा में हो तथा कुछ माल के रूप में हो तो उसे विक्रय अनुबन्ध माना जाता है।

2. **विक्रय तथा उपहार में अन्तर (Sale Vs. Gift) :** विक्रय में मुद्रा के रूप में प्रतिफल का होना अनिवार्य होता है जबकि उपहार की स्थिति में वस्तु का स्वामित्व बिना प्रतिफल के एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरित हो जाता है।

3. **विक्रय तथा निक्षेप में अन्तर (Sale Vs. Bailment) :** निक्षेप विक्रय से भिन्न होता है। विक्रय में वस्तु के स्वामित्व का हस्तान्तरण मुद्रा के बदले में विक्रेता से क्रेता को किया जाता है जबकि निक्षेप के अनुबन्ध में माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण निक्षेपग्रहीता को नहीं किया जाता। इसमें माल का हस्तान्तरण एक निश्चित उद्देश्य के लिए किया जाता है तथा उद्देश्य पूरा होते ही निक्षेपग्रहीता निक्षेपी को माल वापस कर देता है।

4. **विक्रय तथा गिरवी में अन्तर (Sale Vs. Pledge) :** गिरवी का प्रयोग जमानत के लिए निक्षेप के रूप में किया जाता है। जब एक व्यक्ति जमानत के रूप में किसी चल सम्पत्ति को गिरवी रखकर उसके बदले में कुछ धन उधार लेता है तो उसे गिरवी कहा जाता है। यह विक्रय से बिल्कुल ही भिन्न है।

5. **विक्रय तथा किराया क्रय ठहराव में अन्तर (Sale Vs. Hire Purchase Agreement) :** किराया क्रय वस्तु को विक्रय की एक विशेष विधि है जिसका प्रयोग व्यापारिक जगत में अक्सर किया जाता है। यह ठहराव वह अनुबन्ध है जिसमें विक्रेता, क्रेता द्वारा निश्चित किश्तों में कीमत का कुछ भाग चुका देने के बाद माल के स्वामित्व को क्रेता को हस्तान्तरित करने का वचन देता है। इस अवधि में यदि क्रेता तय की गई किश्तों का भुगतान नहीं करता तो विक्रेता अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार वस्तु को वापस ले सकता था तथा भुगतान की गई किश्तों को वस्तु का किराया मानकर जब्त भी कर सकता है। इसका कारण यह होता है कि माल पर स्वामित्व विक्रेता का ही होता है। समस्त किश्तों का भुगतान कर दिये जाने पर क्रेता वस्तु का स्वामी बन जाता है उससे पहले नहीं। इस प्रकार यह विक्रय के साधारण अनुबन्ध से बहुत से अर्थों में अलग है क्योंकि विक्रय अनुबन्ध में वस्तु के स्वामित्व का हस्तान्तरण विक्रेता से क्रेता को एक निश्चित कीमत के बदले में कर दिया जाता है तथा उसके पश्चात् उसका स्वामित्व क्रेता को होता है जबकि किराया क्रय पद्धति में ऐसा नहीं होता।

3.3 विक्रय के अनुबन्ध की विषय वस्तु (Subject Matter of Contract of Sale)

धारा 2(7) के अनुसार माल से तात्पर्य, अभियोग के योग्य दावे और मुद्रा को छोड़कर सब प्रकार चल–सम्पत्ति से है और इसमें स्टॉक, अंश, फसलों, घास और दूसरी ऐसी वस्तुएँ जो भूमि से सम्बन्धित हो, किन्तु विक्रय के अनुबन्ध के अन्तर्गत भूमि से अलग करने का ठहराव कर लिया गया हो, शामिल है। केवल चल वस्तुएँ ही माल कहलाती है और अचल सम्पत्ति के अनुबन्ध इस अधिनियम के क्षेत्र में नहीं आते।

अनुबन्ध की विषय वस्तु माल है। धारा 6 के अनुसार माल विक्रय अनुबन्ध के समय विद्यमान होना चाहिए। इस प्रकार माल तीन प्रकार का हो सकता है :

(1) विद्यमान (Existing) : धारा 6(1) विद्यमान माल से आशय ऐसे माल से है जो विक्रय अनुबन्ध के समय विक्रेता के स्वामित्व में हो तथा वास्तविक रूप से विद्यमान हो। विद्यमान में माल दो प्रकार का हो सकता है –

(i) निश्चित माल (Specific Goods) : निश्चित माल उस माल को कहते हैं जो बिक्री के समय बिल्कुल तैयार हो तथा वस्तु वास्तव में छाँटकर या नाम करके रखा गया हो।

(ii) अनिश्चित माल (Non-Specific Goods) : जब माल निश्चित न हो बल्कि केवल विवरण द्वारा ही बता दिया गया हो तो माल अनिश्चित कहलाता है।

उदाहरण– यदि मोहन के पास 5 घोड़े हैं और उनमें से एक घोड़ा राजा को बेचने का वचन देता है और अनुबन्ध के समय यह घोड़ा दिखा भी देता है तो यह घोड़ा निश्चित कहलायेगा। यदि मोहन अनुबन्ध के समय राजा को घोड़ा नहीं दिखाता बल्कि एक घोड़ा बेचने का वचन देता है तो यह अनुबन्ध अनिश्चित माल कहलायेगा।

(2) भावी माल (Future Goods) : धारा 6 के अनुसार भावी माल वह माल होता है जिसको विक्रेता अनुबन्ध के समय अपने पास नहीं रखता है बल्कि भविष्य में उन वस्तु का स्वयं उत्पादन करेगा या दूसरी जगह से लायेगा।

(3) संयोगिक माल (Contingent Goods) : ऐसे माल से तात्पर्य उस माल से है जिसका विक्रेता द्वारा प्राप्त करना किसी घटना के होने या न होने पर निर्भर करता है। यह भी एक प्रकार से भावी माल होता है।

उदाहरण : राम, मोहन से एक वस्तु का अनुबन्ध करता है कि वह जहाज से आने वाले माल में से 10 गाँठ रुई के देगा।

अनुबन्ध जहाज के आने पर ही पूरा होगा।

3.4 माल का नष्ट होना (Destruction of Goods)

धारा 7 के अनुसार जब एक बिक्री का अनुबन्ध निश्चित माल के लिए होता है और ऐसे माल का कुछ भाग नष्ट अथवा खराब हो जाता है तो ऐसी दशा में बहुत बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार यदि अनुबन्ध एक है और विभाजित नहीं किया जा सकता तो ऐसी दशा में अनुबन्ध व्यर्थ होगा। किन्तु यदि अनुबन्ध विभाजित किया जा सकता है तो अनुबन्ध व्यर्थ नहीं होगा और क्रेता को माल स्वीकार करना होगा।

(i) विशिष्ट माल का अनुबन्ध से पूर्व नष्ट होना : जब अनुबन्ध किसी विशिष्ट माल को बेचने के लिए किया गया है, और यदि अनुबन्ध करते समय विक्रेता की जानकारी के बिना माल नष्ट हो चुका है, जोकि वर्णन के अनुसार मेल नहीं खाता तो ऐसा अनुबन्ध व्यर्थ होता है।

(ii) विशिष्ट माल का विक्रय से पूर्व परन्तु विक्रय के ठहराव के बाद नष्ट होना : यदि अनुबन्ध हो चुका है और बाद में क्रेता को जोखिम हस्तान्तरण होने के पहले माल विक्रेता अथवा क्रेता की ओर से बिना किसी कमी के ही नष्ट हो जाए अथवा इस प्रकार खराब हो जाये कि माल विवरण के अनुसार न रह जाये तो ठहराव व्यर्थ हो जाता है।

उदाहरण - हाबेल बनाम कुपलेण्ड के विवाद में किसी विशिष्ट खेत ने उगाये 200 टन आलू की बिक्री करने का अनुबन्ध हुआ था। किन्तु विक्रेता के बिना किसी दोष फसल खराब हो जाने पर सुपुर्दगी देना मुश्किल हो गया। न्यायालय में इस अनुबन्ध को व्यर्थ करार दिया।

3.5 मूल्य या कीमत (Price)

वस्तु विक्रय अनुबन्ध में महत्त्वपूर्ण नियम यह है कि कोई भी बिक्री कीमत के नहीं हो सकती। बिना कीमत के अनुबन्ध वस्तु विक्रय अनुबन्ध नहीं माना जाता बल्कि एक उपहार का व्यवहार होगा। धारा 2(10) के अनुसार मूल्य से तात्पर्य मुद्रा के रूप में वस्तु विक्रय के प्रतिफल से है। इस प्रकार मूल्य की तीन विशेषताएँ हैं -

1. यह निश्चित होना चाहिए या निश्चित किये जाने योग्य होना चाहिए।
2. मूल्य मुद्रा के रूप में होना चाहिए।
3. मूल्य वास्तविक होना चाहिए।

3.6 मूल्य के निर्धारण के ढंग (Modes of Fixing Price)

वैसे तो मूल्य किसी भी ऐसे ढंग द्वारा निश्चित किया जा सकता है जो विक्रय के अनुबन्ध में तय हो गया हो किन्तु मूल्य निर्धारण के विषय में कुछ तय नहीं है तो धारा 9(1) की सहायता से कुछ ढंग निर्धारण में प्रयोग कर सकते हैं -

1. अनुबन्ध द्वारा मूल्य निश्चित हो सकता है।
2. मूल्य का निर्धारण किसी निश्चित रीति द्वारा बाद में तय होने के लिए छोड़ा जा सकता है।
3. मूल्य पक्षकारों के आपसी व्यवहार द्वारा निर्धारित किया जा सकता है।
4. मूल्य का निर्धारण कभी-कभी तीसरे पक्षकार द्वारा निश्चित करने के लिए छोड़ दिया जाता है।
5. यदि मूल्य आपस में निर्धारित नहीं किया जा सकता तो क्रेता विक्रेता को एक मूल्य देने के लिए बाध्य होता है।

इस प्रकार क्रेता को मूल्य का भुगतान देश की प्रचलित मुद्रा में करना चाहिए। भुगतान वैधानिक मुद्रा में होना चाहिए।

3.7 शर्तें तथा आश्वासन (Conditions and Warranties)

जब वस्तु विक्रय अनुबन्ध के अनुसार एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के पास कुछ सामान खरीदने के लिए जाता है तो क्रेता को पूरा अधिकार होता है कि कोई भी सामान खरीद सकता है। इस प्रकार यदि खरीदने के पश्चात् वह वस्तु खराब सिद्ध होती है तो वह विक्रेता को उत्तरदायी नहीं ठहरा सकता । एक साधारण नियम यह है कि क्रेता को वस्तु खरीदते समय बहुत ही सावधानी से कार्य करना चाहिए अर्थात् वस्तु खरीदते समय अपनी पूरी होशियारी का प्रयोग करना चाहिए। ऐसे नियम को अधिनियम में 'क्रेता सावधान हो' के नाम से पुकारा जाता है। क्रेता वस्तु खरीद के समय अपनी मन-पसन्द की वस्तु विक्रेता को बतला सकता है कि इसी प्रकार की वस्तु चाहिए। धारा 12(1) के अनुसाद यदि क्रेता-विक्रेता के सामने कुछ शर्तें रख देता है और अपनी जरूरत के विषय में बतला देता है तो ये शर्तें दो प्रकार की हो सकती है - अर्थात् कुछ शर्तें बहुत महत्त्वपूर्ण और कुछ शर्तें कम महत्त्वपूर्ण। ऐसी दशा में क्रेता 'सावधान हो' वाला नियम लागू नहीं होता। इस प्रकार विक्रेता को क्रेता द्वारा रखी हुई शर्तें पूरी करनी होंगी क्योंकि विक्रेता इसके लिए बाध्य है। ऐसी शर्तों को दो महत्त्वपूर्ण नामों से पुकारा जाता है जो इस प्रकार से है -

1. **शर्त (Condition) :** धारा 12(2), जब क्रेता विक्रेता के सामने कोई शर्त रखता है और वह उस शर्त को आवश्यक मानता है कि यदि वह पूरी न हुई तो क्रेता अनुबन्ध को रद् कर देगा और हर्जाने के लिए वाद प्रस्तुत कर सकता है तो इस प्रकार ऐसी स्थिति शर्त कहलाती है।

2. **आश्वासन (Warranty) :** धारा 12(3) के अनुसार आश्वासन उस बन्धन को कहते हैं जो अनुबन्ध के मुख्य उद्देश्य के लिए सम्पार्श्विक होता है तथा जिसके भंग होने पर केवल हर्जाने का दावा करने का अधिकार प्राप्त होता है, किन्तु वस्तु को अस्वीकार करने और अनुबन्ध को त्याग करने का नहीं।

3.7.1 शर्त एवं आश्वासन के प्रकार (Kinds of Conditions and Warranties)

1. **स्पष्ट शर्त (Expresse Condition) :** स्पष्ट शर्त से तात्पर्य वह शर्त है जो निश्चित रूप से अनुबंध करते समय बता दी जाती है।

2. **गर्भित शर्त (Implied Condition) :** गर्भित शर्त से तात्पर्य ऐसी शर्त से है जो क्रेता द्वारा अनुबन्ध करते समय बताई नहीं जाती अर्थात् अधिनियम द्वारा अपने आप उत्पन्न होती है और वे अनुबन्ध में पहले ही मान ली जाती है।

3. **स्पष्ट आश्वासन (Expresse Warranty) :** गर्भित शर्त की भांति कभी-कभी आश्वासन भी गर्भित रहता है अर्थात् ये पहले से ही अनुबन्ध में मौजूद थी।

नमूने द्वारा विक्रय की दशा में गर्भित शर्त (Implied Conditions in Case of Sale by Sample): यदि बिक्री नमूने द्वारा की जाती है तो ऐसी दशा में भी माल के सम्बन्ध में कुछ गर्भित शर्त होती है जो इस प्रकार है-

1. पूरे माल को नमूने के अनुसार होना – जब बिक्री नमूने द्वारा होती है तो एक गर्भित शर्त यह होती है कि पूरा माल ऐसा होना चाहिए जैसा कि नमूने में दिया हुआ है।

2. क्रेता को माल नमूने के साथ तुलना करने का उचित अवसर प्राप्त होना – धारा 17(2)(b) के अनुसार गर्भित शर्त यह है कि क्रेता को इस बात का पूर्ण अवसर मिलेगा कि वह माल की तुलना नमूने के साथ कर सके।

3. पूरे माल में ऐसा दोष नहीं होगा जो नमूने की उचित जाँच कर ज्ञात न हो सके। धारा 17(2)(c) के अनुसार एक गर्भित शर्त यह भी है कि माल में कोई ऐसी कमी नहीं होगी जो नमूने को ठीक प्रकार से देखने पर भी न जानी जा सके। इसलिए यदि माल खरीदने के बाद माल में कोई ऐसी कमी निकलती है जो कि एक साधारण बुद्धि वाला क्रेता उचित जाँच कर नहीं जान सकता था तो उसको यह अधिकार होगा कि वह अनुबन्ध को व्यर्थ कर दें।

3.7.2 नमूने द्वारा बिक्री की परिभाषा (Definition of Sale by Sample)

नमूने द्वारा बिक्री का अनुबन्ध वह अनुबन्ध है, जिसमें कि एक विषय में स्पष्ट रूप से या गर्भित रूप से कुछ बताया गया हो। इसलिए एक नमूने द्वारा बिक्री या तो गर्भित रूप से हो सकती है या स्पष्ट रूप से।

3.7.3 वस्तु के स्वामित्व का हस्तान्तरण (Transfer of Ownership in Goods)

वस्तु के हस्तान्तरण से सम्बन्धित नियम धारा 18 से 26 में दिये हुए हैं। वास्तव में वस्तु विक्रय अनुबन्ध में विक्रेता एक निश्चित मूल्य के बदले क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तान्तरित करता है अथवा ऐसा ठहराव करता है। इस प्रकार माल के स्वामित्व के हस्तान्तरण के बिना कोई भी वस्तु विक्रय इस अनुबन्ध का हो ही नहीं सकता। इस अनुबन्ध में यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि स्वामित्व के साथ-साथ जोखिम भी हस्तान्तरित हो जाती है चाहे सुपुर्दगी हुई हो या नहीं। ऐसी दशा में हमें अधिनियम की सहायता लेनी चाहिए क्योंकि वस्तु स्वामित्व के हस्तान्तरण के विषय में कुछ नियम बताये गये हैं। इस प्रकार वस्तु का स्वामित्व केवल निश्चित माल में ही हस्तान्तरित होता है और अनिश्चित माल में कभी भी नहीं, जब तक वह निश्चित न हो जाये।

3.8 स्वामित्व के हस्तान्तरण के नियम (Rules of Passing of Property)

1. **माल निश्चित होना :** धारा 18 के अनुसार जब बिक्री का अनुबन्ध ऐसे माल के लिए होता है जो अभी निश्चित नहीं किया गया अर्थात् जब तक माल निश्चित न हो जाए तब तक उसकी स्वामित्व क्रेता के पास नहीं जाता है।

2. **विशिष्ट माल सुपुर्दगी योग्य होना :** धारा 20 के अनुसार जब विक्रय अनुबन्ध बिना किसी शर्त के होता है और निश्चित एवं सुपुर्दगी की स्थिति में हो तो ऐसे माल में स्वामित्व का हस्तान्तरण क्रेता को उसी समय हो जाता है जिस समय अनुबन्ध किया जाता है।

3. **विशिष्ट माल सुपुर्दगी योग्य दशा में लाना :** धारा 21 के अनुसार जब विक्रय का अनुबन्ध निश्चित माल के सम्बन्ध में हो, किन्तु वस्तु की सुपुर्दगी योग्य लाने के लिए यदि विक्रेता को कुछ कार्य करना हो, तो ऐसी दशा में विक्रेता द्वारा कार्य खत्म करने के बाद ही क्रेता को स्वामित्व का हस्तान्तरण होगा।

4. **विशिष्ट माल सुपुर्दगी योग्य दशा में हो तथा कीमत तय करने हेतु कोई कार्य शेष न हो:** धारा 22 के अन्तर्गत जब विक्रय का अनुबन्ध निश्चित माल के लिए हो, और वह माल सुपुर्दगी

योग्य स्थिति में है परन्तु माल के मूल्य निर्धारण से सम्बन्धित विक्रेता को कुछ कार्य करना है जैसे लादना, तोलना इत्यादि। इस प्रकार जब तक आवश्यक कार्य न हो जाए तब तक वस्तुओं के स्वामित्व का हस्तान्तरण नहीं होता और क्रेता को यह सूचना मिल जाए कि कार्य कर दिया गया है।

5. **अनिश्चित तथा भावी माल की बिक्री :** धारा 23 के अनुसार जब बिक्री का अनुबन्ध अनिश्चित या भावी माल के लिए हो और माल विवरण द्वारा बेचा गया हो तो ऐसी दशा में स्वामित्व का हस्तान्तरण क्रेता का उसी समय होगा जब विक्रेता द्वारा क्रेता की मर्जी से माल निश्चित कर दिया जाए। ऐसी मर्जी स्पष्ट या गर्भित हो सकती है और निश्चित करने से पहले या बाद में दी जा सकती है।

6. **वाहक द्वारा सुपुर्दगी :** धारा 23(1) के अनुसार जब विक्रेता माल की सुपुर्दगी क्रेता को दे देता है या वाहक को क्रेता के पास पहुंचने के लिए दे देता है – ऐसे वाहक का नाम चाहे क्रेता ने बताया है या नहीं तो ऐसी दशा में ऐसा माना जाएगा कि सामान बिना किसी शर्त के अनुबन्ध के अनुसार दे दिया है जब तक विक्रेता द्वारा वस्तु पर कोई अधिकार न रखा जाए।

7. **विक्रेता द्वारा माल बेचने का अधिकार अपने पास रखने पर :** धारा 25 के अनुसार जब विक्रेता ने कुछ वस्तुएँ किसी वाहक द्वारा क्रेता के पास भेजी है, बेचने का अधिकार अपने पास रख देता है तो ऐसी वस्तुओं का स्वामित्व क्रेता को उस समय तक हस्तान्तरण नहीं होता जब तक कि क्रेता विक्रेता द्वारा लगाई शर्त पूरी न कर दें।

3.8.1 अधिकार का हस्तान्तरण (Transfer of Title)

धारा 27 से 30 तक माल के अधिकार से सम्बन्धित कुछ नियम दिये हुए हैं। माल के अधिकार से तात्पर्य माल के स्वामित्व के अधिकार के हस्तान्तरण से है, केवल माल के हस्तान्तरण से नहीं, माल के स्वामित्व के हस्तान्तरण और माल के हस्तान्तरण में बहुत अन्तर है। माल के स्वामित्व का हस्तान्तरण कौन कर सकता है। इससे सम्बन्धित कुछ अध्ययन धारा 27 से 30 में उल्लेख किया गया है।

जब माल का विक्रय ऐसे व्यक्ति द्वारा जो माल का स्वामी नहीं है, क्योंकि माल का स्वामी विक्रेता होता है। इसी कारण विक्रेता ही माल के स्वामित्व अथवा माल के अधिकार का क्रेता को हस्तान्तरण करने की योग्यता रखता है। परन्तु कभी-कभी विक्रेता चोरी का माल क्रेता को बेचता है, अथवा कोई एजेण्ट अपने अधिकार की सीमा के बाहर किसी माल की बिक्री कर देता है। इन सभी स्थितियों में विक्रेता माल का वास्तविक स्वामी नहीं होता। अब सवाल इस बात का है कि ऐसी दशा में मूल्य की हानि किस पक्षकार की होगी।

1. क्या निर्दोष क्रेता हानि को सहन करें?
2. दोषी विक्रेता हर्जाना दे?
3. क्या वास्तविक स्वामी सदैव के लिए माल को त्याग दे?

ऐसी परिस्थितियों में यदि विक्रेता जो माल का असली स्वामी नहीं है, दोषपूर्ण विक्रय के लिए माल का मूल्य निर्दोष क्रेता को वापिस करने में समर्थ है, तो क्रेता अपनी हानि की पूर्ति विक्रेता से ही करा सकता है। यदि विक्रेता इस योग्य नहीं है तो विक्रेता से कुछ भी वसूल नहीं किया जा सकता।

भारतीय विक्रय अधिनियम में ऐसी स्थिति से निबटने के लिए कुछ नियम दिये गये हैं। धारा 27 इस बात का उल्लेख करती है कि कोई भी क्रेता माल के विक्रेता से श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता। इसका तात्पर्य यह है कि यदि विक्रेता का अधिकार अच्छा है, तो क्रेता का भी अधिकार अच्छा होगा। इस प्रकार विक्रेता के अधिकार के साथ ही क्रेता का अधिकार प्रभावित होता है।

नियम के अपवाद (Exception to the Rule) : धारा 27(1) के अनुसार नियम यह है कि विक्रेता के अधिकार के समान ही क्रेता का अधिकार होता है, परन्तु कुछ स्थितियों में क्रेता विक्रेता से अच्छा अधिकार प्राप्त कर सकता है, ये अपवाद निम्न प्रकार के हैं -

1. व्यापारिक एजेण्ट द्वारा बिक्री की दशा में।
2. विक्रेता द्वारा पुन: बिक्री की दशा में।
3. माल पर अधिकार रखने वाले क्रेता द्वारा विक्रय।
4. खुले बाजार में विक्रय की दशा में।
5. सहस्वामियों में से किसी एक के द्वारा विक्रय।
6. अवरोध द्वारा स्वत्वाधिकार की प्राप्ति।
7. व्यर्थनीय अनुबन्ध के अन्तर्गत माल रखने वाले व्यक्ति द्वारा विक्रय, इत्यादि।

3.8.2 विक्रय अनुबन्ध का निष्पादन (Performance of the Contract)

वस्तु विक्रय अधिनियम में धारा 31 से 144 तक कुछ नियम विक्रय अनुबन्ध के निष्पादन में यह अति आवश्यक है कि क्रेता तथा विक्रेता दोनों अपने-अपने कर्त्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन करें। दोनों में से कोई कभी ऐसा कार्य न करे जो कि उसके अधिकार की सीमा से बाहर थे।

3.8.3 विक्रेता तथा क्रेता के कर्त्तव्य (Duties of Seller and Buyer)

विक्रेता के कर्त्तव्य (Duties of Buyer) : धारा 31 के अनुसार विक्रेता का सबसे महत्वपूर्ण दायित्व यह है कि वह उस माल की सुपुर्दगी दे जो उसने बेचा है।

3.8.4 सुपुर्दगी के प्रकार (Kinds of Delivery)

1. **वास्तविक सुपुर्दगी (Actual Delivery) :** जब माल वास्तव में विक्रेता द्वारा क्रेता अथवा उसके एजेण्ट को प्रदान कर दिया जाता है, तो उसे वास्तविक सुपुर्दगी कहते हैं। जैसे मोहन एक दुकान से दो पुस्तकें खरीदता है और दुकानदार तुरन्त पुस्तकें दे देता है वह वास्तविक सुपुर्दगी कहलाती है।

2. **रचनात्मक सुपुर्दगी (Constructive Delivery) :** तब माल विक्रेता की ओर से अन्य किसी व्यक्ति के पास होता है और वह व्यक्ति उसे क्रेता की ओर से रखने के लिए सहमत हो जाता है अथवा माल विक्रेता अथवा किसी अन्य के पास ही रहे। उदाहरण के तौर पर जब विक्रेता या उसका प्रतिनिधि माल के अधिकार पत्र क्रेता को सौंप दे तो यह रचनात्मक सुपुर्दगी है।

3. **सांकेतिक सुपुर्दगी (Symbolic Delivery) :** जब वस्तु इतनी भारी होती है कि विक्रेता उसको उठाकर क्रेता को नहीं दे सकता केवल संकेत प्रदान कर सकता है, जिसे सांकेतिक सुपुर्दगी कहते हैं। इस प्रकार अधिकार में परिवर्तन होने पर इस क्रिया को सुपुर्दगी ही माना जाता है।

3.8.5 सुपुर्दगी सम्बन्धी नियम (Rules Regarding Delivery)

सुपुर्दगी सम्बन्धित नियम निम्नलिखित है –

1. **सुपुर्दगी का स्थान (Place of Delivery) :** अनुबन्ध में सुपुर्दगी का स्थान दिया जाता है। अतः जब अनुबन्ध में स्थान दिया हो तो विक्रेता का यह कर्त्तव्य है कि वर्णित स्थान पर सुपुर्दगी दे। यदि इस सम्बन्ध में कोई अनुबन्ध न किया जाए तो साधारण नियम यह है कि, सामान की सुपुर्दगी उस जगह पर दी जाएगी जिस जगह पर सामान बिक्री के समय था।

(2) **सुपुर्दगी का समय (Time of Delivery) :** यदि किसी अनुबन्ध के अनुसार यह तय हो जाए कि विक्रेता क्रेता के पास स्वयं सामान भेजेगा, किन्तु सामान सम्बन्धी कोई समय निश्चित न हो तो ऐसी दशा में साधारण नियम यह है कि सामान उचित समय के अन्दर-अन्दर भेज दिया जाना चाहिए। (1) (धारा 35(2))

(3) **सुपुर्दगी का ढंग (Mode of Delivery) :** धारा 36(1) के अनुसार विक्रेता को माल क्रेता के पास भेजना है अथवा क्रेता को स्वयं जाकर सुपुर्दगी प्राप्त करनी है, यह बात दो पक्षकारों पर निर्भर करती है।

(4) **माल का तीसरे व्यक्ति के अधिकार में होना :** जब बिक्री के समय सामान किसी तीसरे पक्ष के अधिकार में हो तो विक्रेता द्वारा क्रेता को ऐसे माल की सुपुर्दगी उस समय तक नहीं मानी जाएगी जब तक कि तीसरा पक्ष क्रेता को यह न कह दे कि वह अब माल को क्रेता के लिए ही रखता है।

(5) **सुपुर्दगी का व्यय अथवा लागत (Expenses of Delivery) :** धारा 36(5) के अनुसार जब तक कि उसके विपरीत कोई अनुबन्ध न हो तो एक नियम यह है कि बेचे हुए माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति में लाने के खर्चे स्वयं विक्रेता को ही सहन करने होंगे।

(6) **गलत परिणाम में माल की सुपुर्दगी :** धारा 37(1) के अनुसार जब विक्रेता, क्रेता को माल अनुबन्ध के अनुसार गलत भेजता है तो ऐसी दशा में क्रेता उसे लेने से इन्कार कर सकता है। यदि क्रेता ऐसा सामान स्वीकार कर लेता है तो उसे अनुबन्ध के अनुसार मूल्य का भुगतान करना होगा।

(7) **किश्तों में सुपुर्दगी होना (Delivery in Instalments) :** धारा 38(1) के अनुसार जब तक कोई विपरीत अनुबन्ध न हो माल की सुपुर्दगी को क्रेता किश्तों में स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है।

(8) **वाहक द्वारा सुपुर्दगी :** धारा 39(1), यदि माल की सुपुर्दगी विक्रेता के किसी वाहक के द्वारा क्रेता के पास भेजी जाती है तो ऐसी दशा में साधारण नियम यह है कि माल क्रेता को हुई मानी जाएगी।

(9) **जोखिम जब माल की सुपुर्दगी दूरस्थ स्थान पर होती है :** धारा 40 के अनुसार जब विक्रेता अपनी जोखिम पर माल की सुपुर्दगी किसी दूसरे स्थान पर देने का वायदा करती है तो किसी विपरीत अनुबन्ध के अभाव में मार्ग में होने वाली हानि को क्रेता को ही सहन करना पड़ता है।

(10) **सामान का बीमा कराने हेतु विक्रेता का दायित्व :** धारा 39(2) के अनुसार यदि सामान किसी वाहक के द्वारा भेजा जा रहा है तो विक्रेता का यह दायित्व बनता है कि सामान का बीमा कराये।

3.8.6 क्रेता द्वारा माल की स्वीकृति (Buyer's Acceptance of Goods)

धारा 42 के अनुसार निम्नलिखित स्थितियों में यह समझा जाता है कि क्रेता ने माल को स्वीकार कर लिया है-

1. माल के स्वीकार की सूचना क्रेता द्वारा विक्रेता को।
2. जब माल की सुपुर्दगी क्रेता को दी गई है।
3. जब निश्चित समय के बीत जाने के बाद भी क्रेता माल अपने पास रखे और विक्रेता को सूचित न करे कि वह माल को अस्वीकार करता है।

धारा 43 के अनुसार क्रेता अस्वीकृत माल को लौटाने के लिए बाध्य नहीं, उसके लिए केवल विक्रेता को सूचित कर देना ही काफी होगा कि यह माल को स्वीकार करने से इन्कार करता है।

इन्कार करने पर क्रेता का दायित्व :

जब विक्रेता माल की सुपुर्दगी को देने को तैयार और इच्छुक है तथा क्रेता से सुपुर्दगी लेने का आरोप करता है, परन्तु क्रेता इस अनुरोध पर भी समय के अनुसार सुपुर्दगी नहीं देता है, तो इस प्रकार की अस्वीकृति से विक्रेता को जो हानि होती है, उसके लिए क्रेता उत्तरदायी होगा। किन्तु जब क्रेता अपने अधिकारों के अधीन सुपुर्दगी लेने में असावधानी करता है, तो वह ऐसी हानि के लिए विक्रेता के प्रति उत्तरदायी नहीं होगा।

3.8.7 अदत्त विक्रेता के माल के विरुद्ध अधिकार (Right of Unpaid Seller Against the Goods):

परिभाषा (Definition) : निम्नलिखित दशाओं में माल का विक्रेता अदत्त विक्रेता माना जाता है।

(i) जब उसे माल का सम्पूर्ण मूल्य नहीं चुकाया गया हो अथवा प्रस्तुत नहीं किया गया है।

(ii) जब उसे कोई विनिमय पत्र अथवा कोई विनिमय साक्ष्य प्रलेख शर्त मुक्त भुगतान के रूप में प्राप्त हुआ है और वह शर्त उस प्रलेख के अप्रतिष्ठित के कारण में पूरी न हुई हो।

(iii) इस सम्बन्ध में कोई भी व्यक्ति जो कि विक्रेता की स्थिति में हो विक्रेता कहलाता है, जैसे कोई एजेण्ट इत्यादि।

3.9 अदत्त विक्रेता के अधिकार (Rights of Unpaid Seller)

1. माल के विरुद्ध अदत्त विक्रेता के अधिकार।
2. क्रेता के विरुद्ध अदत्त विक्रेता के अधिकार।

1. **माल के विरुद्ध अद्धत विक्रेता के अधिकार :** वस्तु विक्रय अधिनियम की धारा 46(1) के अनुसार जब अद्धत विक्रेता ने माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तान्तरित कर दिया हो, उसे निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं –

   (i) माल पर ग्रहणाधिकार (Right of Lien)

   (ii) माल को मार्ग में रोकने का अधिकार (Right to Stoppage of Goods in Transit)

   (iii) माल को पुन: विक्रय का अधिकार (Right to Resale)

2. क्रेता के विरुद्ध अद्धत विक्रेता के अधिकार : ये अधिकार निम्नलिखित हैं –

   (i) मूल्य के लिए वाद प्रस्तुत करने का अधिकार

   (ii) ब्याज के लिए वाद प्रस्तुत करने का अधिकार

   (iii) अनुबन्ध तोड़ने पर हानि पाने का अधिकार

   (iv) हानि के लिए वाद प्रस्तुत करने का अधिकार।

3.10 नीलाम द्वारा विक्रय (Sale by Auction)

नीलाम द्वारा विक्रय का अर्थ : नीलाम द्वारा बिक्री उस बिक्री को कहते हैं जब एक व्यक्ति माल को जनता के बीच नीलाम द्वारा बेचता है और जनता में से वो जो भी व्यक्ति सबसे ज्यादा बोली लगाएगा उसी को माल बेचा समझा जायेगा। इस प्रकार सर्वप्रथम, नीलाम द्वारा भी बिक्री करने की सूचना सर्वसाधारण को दी जाती है। इसके बाद नियमित स्थान अथवा समय पर लोग इकट्ठे होते हैं। धारा 64 के अनुसार नीलाम द्वारा बिक्री के सम्बन्ध में कुछ नियम बताए गए हैं –

1. **नीलाम बहुत से भागों में बेचा जाने पर :** जब माल विभिन्न भागों में बेचा जाता है तो हर भाग के सम्बन्ध में अलग-अलग बिक्री अनुबन्ध होता है।

2. **साधारणतया विक्रेता बोली नहीं दे सकता (Seller Cannot Bid) :** माल का स्वामी स्वयं या कोई अन्य व्यक्ति उसकी ओर से माल को बोली नहीं दे सकता किन्तु वह ऐसा कर सकता है। यदि उसने ऐसा अधिकार स्पष्ट रूप से विज्ञापन द्वारा सुरक्षित कर लिया है।

3. **बिक्री पूरी न लेने तक बोली वापस होने का अधिकार :** जब तक नीलाम द्वारा बिक्री की घोषणा नहीं हो जाती तब तक बोली लगाने वाले को यह अधिकार रहता है कि वह अपनी बोली वापस ले ले।

4. **बनावटी बोली की अवस्था में :** जब जान-बूझ कर विक्रेता (माल का स्वामी) मूल्य के बढ़ाने के लिए बनावटी बोली का प्रयोग करता है तो ऐसी स्थिति में क्रेता को नीलामी को व्यर्थ करने का अधिकार होता है।

5. **निर्धारित मूल्य निर्धारित करना (To Determine Fixed Price) :** नीलाम द्वारा बिक्री करने से पहले माल की निश्चित कीमत की घोषणा की जाती है। मूल्य इसलिए निर्धारित किया जाता है कि यदि कोई व्यक्ति इस सीमा तक बोली नहीं लगाता है तो विक्रेता माल बेचने के लिए बाध्य नहीं है।

4. सारांश (Summary)

वस्तु विक्रय अधिनियम 1930 की स्थापना से पहले यह अधिनियम अनुबन्ध अधिनियम 1872 का एक हिस्सा था। परन्तु व्यवसाय के बढ़ते आकार तथा व्यवहारों की संख्या के कारण एक विस्तृत तथा व्यापक अधिनियम की आवश्यकता उत्पन्न हुई जिसके कारण एक व्यापक तथा प्रभावशाली रूप में इस अधिनियम को स्थापित किया गया। इस अधिनियम की धारा 2 के अन्तर्गत इस अधिनियम की आधारभूत परिभाषाओं जैसे क्रेता, विक्रेता, वस्तु, कीमत आदि को परिभाषित किया गया। इसी तरह से यह अधिनियम विक्रय, विक्रय अनुबन्ध तथा उसके आवश्यक लक्षणों की जानकारी उपलब्ध करवाता है। विक्रय किन कारणों से उपहार, वस्तु विनिमय तथा किराया क्रय पद्धति से भिन्न है इसकी जानकारी भी इसमें दी गई है। इसी प्रकार 'क्रेता की सावधानी के सिद्धान्त' के साथ-साथ यह शर्तों तथा आश्वासनों की जानकारी प्रदान करता है। विक्रय अनुबन्ध में किन-किन गर्भित शर्तों तथा आश्वासनों का पालन किया जाना चाहिए था। इस सम्बन्ध में भी यह अधिनियम पाठकों को जानकारी उपलब्ध करवाता है। वस्तु विक्रय अनुबन्ध के अन्तर्गत क्रेता तथा विक्रेता के दायित्वों तथा कर्त्तव्यों का उल्लेख भी इसमें किया गया है। एक अनुबन्ध के निष्पादन के लिए किन-किन नियमों का पालन किया जाना चाहिए। अधिनियम में समस्त प्रावधान इस सन्दर्भ में भी किए गए हैं। क्रेता या विक्रेता द्वारा अनुबन्ध का खण्डन किए जाने पर उपलब्ध अधिकारों तथा उपचारों की भी यह अधिनियम व्यवस्था करता है। इसी प्रकार क्रेता द्वारा वस्तु की कीमत का भुगतान न किये जाने पर एक 'अदत्त विक्रेता' की वैधानिक स्थिति तथा अधिकारों की यह अधिनियम पूर्ण व्याख्या करता है। कुछ विशेष परिस्थितियों में वस्तु का स्वामी के अतिरिक्त किसी और व्यक्ति द्वारा विक्रय कैसे वैध हो सकता है इसकी जानकारी भी अधिनियम में दी गई है। अन्त में यह कहा जा सकता है कि यह अधिनियम व्यापार जगत में क्रय-विक्रय के व्यवहारों की सफलतापूर्वक सम्पन्नता के लिए प्रावधानों को बनाता तथा लागू करता है।

5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. व्यावसायिक नियमन रूपरेखा : नौलखा
2. व्यावसायिक नियमन रूपरेखा : Dr. Ashok Sharma
3. व्यावसायिक नियमन रूपरेखा : Dr. R.C. Chawla
4. Business Regulatory Framework : Dr. S.C. Aggarwal
5. Mercantile Law : Dr. N.D. Kapoor
6. Mercantile Law : Dr. Avtar Singh
7. Business Laws : Rohini Aggarwal

6. नमूने के लिए प्रश्न (Sample Questions)

1. विक्रय अनुबन्ध से आप क्या समझते हैं? विक्रय अनुबन्ध के आवश्यक तत्त्व क्या है?
2. शर्त तथा आश्वासन से आप क्या समझते हैं? एक विक्रय अनुबन्ध में गर्भित शर्त तथा आश्वासनों की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

3. "कोई भी व्यक्ति वह नहीं दे सकता, जो उसके पास नहीं है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

4. अदत्त विक्रेता का क्या अर्थ है? एक अदत्त विक्रेता के अधिकारों का वर्णन कीजिए।

5. विक्रय अनुबन्ध के खण्डन किए जाने पर क्रेता और विक्रेता को कौन-कौन से उपचार उपलब्ध होते हैं?

6. नीलामी द्वारा विक्रय सम्बन्धी नियमों की व्याख्या कीजिए।

Paper : BC-201 Business Laws **Revised by : Parveen Khurana**

Lesson No : 9

विनिमय साध्य लेखपत्र (विपत्र) अधिनियम, 1881
(Negotiable Instruments Act - 1881)

पाठ की संरचना (Structure)

1. परिचय (Introduction)
2. अध्याय का उद्देश्य (Objective of Chapter)
3. विषय का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Contents)
   - 3.1 विनिमय साध्य लेखपत्र के अर्थ
     - 3.1.1 विनिमय साध्य लेखपत्रों का मुख्य लक्षण
     - 3.1.2 विनिमय साध्य लेखपत्रों सम्बन्धी उपधारणाएँ
   - 3.2 विनिमय साध्य लेखपत्रों के प्रकार
   - 3.3 प्रतिज्ञा–पत्र
   - 3.4 विनिमय–पत्र
   - 3.5 चैक
   - 3.6 चैक का अनावरण
   - 3.7 प्रतिज्ञा–पत्र एवं विनिमय–पत्र में अन्तर
   - 3.8 चैक एवं विनिमय–पत्र में अन्तर
     - 3.8.1 वाहक चैक एवं आदेश चैक में अन्तर
     - 3.8.2 सामान्य रेखांकन तथा विशेष रेखांकन में अन्तर
     - 3.8.3 चैक, विनिमय विपत्र एवं प्रतिज्ञा–पत्र में तुलना
   - 3.9 विनिमय साध्य विलेखपत्रधारी
   - 3.10 अनावरण या अप्रतिष्ठा
4. सारांश
5. प्रस्तावित पुस्तकें
6. नमूने के लिए प्रश्न

1. परिचय (Introduction)

'विनिमय साध्य' का अर्थ है सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय तथा 'लेखपत्र' वह लिखित दस्तावेज है जो किसी व्यक्ति के पक्ष में कोई अधिकार निर्मित करता है। अत: विनिमय साध्य विलेखपत्र से आशय ऐसे लिखित लेखपत्रों से है जो किसी व्यक्ति के हित में अधिकार उत्पन्न करते हैं तथा सुपुर्दगी द्वारा हस्तान्तरणीय होते हैं। इसमें सामान्यत: चैक, विनिमय-पत्र (Bill of Exchange) तथा प्रतिज्ञा-पत्र (Promissory note) को शामिल किया जाता है। हमारे दैनिक जीवन में तथा विशेष रूप से व्यावसायिक जगत में इनका निरन्तर प्रयोग होता है। अत: इन सभी लेखपत्रों के बारे में जानकारी होना विशेष रूप से वाणिज्य के छात्रों के लिये अत्यन्त अनिवार्य है।

3. अध्याय के उद्देश्य (Objectives of the chapter) :

इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य पाठकों को विनिमय साध्य लेखपत्रों के अर्थ, लक्षण, प्रकारों आदि से परिचित करवाना है। इसके प्रयोग किये जाते समय ध्यान में रखे जाने वाले नियमों की जानकारी पाठकों को देना भी इसका मुख्य उद्देश्य है। एक लेखपत्र के धारकों के प्रकार तथा उनके अधिकारों की पाठकों को समझाने का प्रयास किया गया है। चैक से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण जानकारी उदाहरण चैक का रेखांकन इत्यादि पाठकों को दिये जाने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार विनिमय-पत्रों के आपस में सम्बन्ध तथा अन्तर को विशेष रूप से पाठकों को समझाना अध्याय का उद्देश्य है। इसी प्रकार विलेखपत्रों के अनावरण की स्थिति में पक्षकारों की स्थिति एवं दायित्व की जानकारी भी पाठकों को पहुँचाने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार यह अध्याय पाठकों को विभिन्न विनिमय लेखपत्रों की आधारभूत तथा विशेष आवश्यक जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से लिखा गया है।

3. विषय का प्रस्तुतीकरण :

विनिमय साध्य लेखपत्र न केवल देश का कानून है बल्कि यह एक व्यापारिक समाज का भी एक महत्त्वपूर्ण नियम है क्योंकि इनमें कुछ ऐसे रिवाज शामिल है जिन्हें सभ्य संसार के व्यापारिक देशों में व्यापारियों के कार्यो को उचित प्रकार से चलाने के लिये साधारण न्याय एवं सुविधा के लिये स्थापित किया गया है।

भारतवर्ष में विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम पास होने से पहले इंग्लैंड के नियम प्रचलित थे और न्यायालय भी व्यक्तिगत नियम काम में लाया करते थे और रीति-रिवाजों के आधार पर निर्णय किया करते थे। भारत में विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम 1881 में पास हुआ जो अंग्रेजी साधारण नियमों की Law.Merchant शाखा पर आधारित है। इसका अर्थ व्यापारियों के उस रीति और व्यवहार से है, जो विभिन्न व्यापारियों में चालू है और जिनकी पुष्टि अंग्रेजी न्यायालयों के निर्णयों ने की है।

3.1 विनिमय साध्य लेखपत्र का अर्थ :

विनिमय साध्य लेखपत्र से तात्पर्य ऐसे लिखित लेखपत्र से है जो किसी व्यक्ति के हित के अधिकार उत्पन्न करता है और जो सुपुर्दगी द्वारा हस्तान्तरणीय होता है। विनिमय साध्य लेखपत्र की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

न्यायाधीश विलिस (Justic Willis) के अनुसार - "विनिमय साध्य लेखपत्र एक ऐसे पत्र को कहते हैं, जो कि लेखपत्र को सद्भावना से और पैसे चुका कर प्राप्त करता है, चाहे पत्र के देने वाले के अधिकार में कोई त्रुटि ही क्यों न हो।"

विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम की धारा 13 के अनुसार – "विनिमय साध्य लेखपत्र से तात्पर्य प्रतिज्ञा–पत्र, विनिमय–पत्र या चैक से है जो कि आदेशित व्यक्ति या वाहक को देय होता है।"

विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम में दी गई परिभाषा अत्यन्त ही संकुचित एवं सीमित है। इससे केवल तीन लेखपत्रों – विनिमय–पत्र, प्रतिज्ञा–पत्र एवं चैक का ही उल्लेख किया गया है जबकि इसमें ऐसे लेखपत्रों को भी शामिल किया जा सकता है जिनमें विनिमय साध्यता का गुण पाया जाता हो। इसलिये लाभांश अधिपत्र, ऋणी–पत्र अथवा रेलवे रसीदें भी इनमें शामिल की जाती है।

3.1.1 विनिमय साध्य लेखपत्रों के मुख्य लक्षण :

विनिमय साध्य लेखपत्रों की मुख्य विशेषताएँ हैं :-

1. यह लिखित होता है।
2. केवल सुपुर्दगी मात्र से ही इसका स्वामित्व हस्तान्तरित किया जा सकता है।
3. इसमें प्रतिफल का उल्लेख नहीं होता है। केवल इसमें मूल्यवान प्रतिफल का होना मान लिया जाता है।
4. इसका धारक अपने नाम से वाद प्रस्तुत कर सकता है।
5. यह ऋणों के भुगतान का सबसे आसान व सुविधाजनक साधन है।
6. यह मुद्रा के रूप में कार्य करता है एवं उसके सामान एक हाथ से दूसरे हाथ हस्तान्तरित होता है।
7. हस्तान्तरिती को हस्तांतरण करते समय किसी को भी सूचना नहीं देनी पड़ती है।

3.1.2 विनिमय साध्य लेखपत्रों सम्बन्धी उपधारणाएँ :

विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम की धारा 118 के अनुसार किसी विपरीत अनुबन्ध के अभाव में इसमें निम्नलिखित उपधारणाएँ हैं –

1. प्रत्येक लेखपत्र प्रतिफल के लिये लिखा गया है, स्वीकृत किया गया है एवं हस्तांतरित किया गया है।
2. प्रत्येक लेखपत्र पर वही तिथि होती है, जिस तिथि पर वह लिखा या बनाया गया है।
3. प्रत्येक लेखपत्र का हस्तांतरण परिपक्वता तिथि से पहले किया गया था।
4. प्रत्येक लेखपत्र लिखने की तिथि के बाद परन्तु उचित अवधि में परिपक्वता तिथि से पहले उसे स्वीकार किया गया था।
5. प्रत्येक खोए हुए प्रतिज्ञा–पत्र या विनिमय पर उचित स्टाम्प लगा हुआ था।
6. विनिमय माध्य लेखपत्र पर लिखे गये क्रम के अनुसार ही उनका हस्तांतरण किया गया है।
7. लेखपत्र का धारक यथाविधि धारक (Holder in due course) है।
8. पहले व्यक्ति के अधिकार के दोषों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर रेलवे रसीद (बिल्टी) (R/R), लाभांश अधिपत्र (Dividend warrant), पोर्ट ट्रस्ट या इम्पूवमेन्ट ट्रस्ट के ऋणपत्र आदि विनिमय साध्य लेख-पत्र कहे जा सकते हैं परन्तु मनीऑर्डर, पोस्टल ऑर्डर, जमा रसीदें, अंश प्रमाण पत्र, जहाजी बिल्टी आदि विनिमय साध्य लेखपत्र नहीं है, यद्यपि ये लेखपत्र बेचान तथा सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय है तथापि ये लेखपत्र सद्‌भावना के साथ एवं मूल्य के लिये धारक को हस्तांतरणकर्ता से अच्छा अधिकार नहीं देते। हस्तांतरणकर्ता का अधिकार दूषित होने पर इन लेखपत्रों के पाने वाले का अधिकार भी दूषित हो जाता है :

विनिमयसाध्य लेखापत्र (Negotiable Instrument)

नोट : अर्द्ध विनिमय साध्य (Semi Negotiable) से आशय ऐसे लेखपत्रों से है जिनका हस्तांतरण यद्यपि बेचान तथा सुपुर्दगी द्वारा किया जा सकता है परन्तु उनका प्राप्तकर्ता उससे श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता जैसा कि हस्तांतरणकर्ता को प्राप्त था। अत: इनको विनिमय साध्य लेखपत्र नहीं कहा जा सकता तथा इन पर विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते।

3.2 विनिमय साध्य लेखपत्रों के प्रकार :

विनिमय के माध्यम के रूप में सामान्यत: किये जाने वाले विनिमय साध्य लेखपत्र दो प्रकार के होते हैं-

(i) कानून द्वारा विनिमय साध्य – धारा 13 के अनुसार विनिमय-पत्र, प्रतिज्ञा-पत्र और चैक ही विनिमय साध्य होते हैं। अत: इन्हें कानून द्वारा विनिमय साध्य कहा जा सकता है।

(ii) प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार विनिमय साध्य – विनिमय-पत्र और चैक के अतिरिक्त कुछ प्रपत्र जैसे- लाभांश अधिपत्र, अंश अधिपत्र, ऋण-पत्र रेलवे रसीद, जहाजी बिल्टी को भी व्यापारिक रीति-रिवाज के कारण विनिमय साध्य लेखपत्र माना जाता है।

प्रस्तुत अध्याय में कानून द्वारा विनिमय साध्य लेख-पत्रों का विस्तृत विवेचन किया गया है ।

3.3 प्रतिज्ञा पत्र (Promissory Note) : विनिमय साध्य लेखपत्र की धारा 4 के अनुसार, "प्रतिज्ञा-पत्र एक लिखित पत्र (बैंक नोट एवं करेन्सी नोट को छोड़कर) है जिस पर लिखने वाले के हस्तांतरण होते हैं। वह और किसी व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या वाहक को एक निश्चित राशि चुकाने का वचन देता है।"

प्रतिज्ञा-पत्र के आवश्यक लक्षण – प्रतिज्ञा-पत्र के आवश्यक लक्षण निम्नलिखित है -

(1) यह लिखित होना चाहिए – केवल जबानी प्रतिज्ञा-पत्र ही काफी नहीं होता है। इसे वैधानिक रूप देने के लिये इसका लिखित होना अनिवार्य है। यह किसी प्रकार से लिखित हो सकता है।

(2) भुगतान करने की प्रतिज्ञा – केवल ऋण की स्वीकृति ही पर्याप्त नहीं होगी। इसमें भुगतान करने की प्रतिज्ञा होनी चाहिए। इसमें वचन या प्रतिज्ञा शब्दों का प्रयोग भी अनिवार्य नहीं है। यदि इसमें लिखे गये शब्दों से स्पष्ट या गर्भित यह अर्थ निकाला जाता है कि उसमें भुगतान की प्रतिज्ञा या वचन दिया गया है तो वह प्रतिज्ञा ही कहलायेगा।

(3) प्रतिज्ञा शर्तरहित होनी चाहिये – अनिश्चितता व्यापार के लिये घातक है। अतः लेखपत्र का भुगतान किसी घटना के घटित होने या न होने पर निर्भर नहीं होना चाहिये। अतः आकस्मिक घटनाओं पर आधारित प्रतिज्ञा-पत्र अवैध होते हैं। यदि लेखपत्र किसी ऐसी घटना पर आधारित है जो निश्चित है तो उस लेखपत्र को प्रतिज्ञा-पत्र कहा जायेगा क्योंकि उसमें निश्चितता का गुण विद्यमान है।

(4) रकम निश्चित होनी चाहिए – प्रतिज्ञा-पत्र में दी गई राशि निश्चित होनी चाहिए और उसमें घटा-बढ़ी की संभावना नहीं होनी चाहिए।

(5) प्रतिज्ञा-पत्र लिखने वाले के हस्ताक्षर होने चाहिए - बिना हस्ताक्षर के एक प्रतिज्ञा-पत्र अपूर्ण है। इसलिए प्रतिज्ञा-पत्र लिखने वाले के हस्ताक्षर होने चाहिए। अधिनियम ने लेख-पत्र पर हस्ताक्षर के प्रकार एवं स्थान पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया है। वह लेखपत्र के किसी भी भाग पर हस्ताक्षर कर सकते हैं।

(6) प्रतिज्ञाकर्ता निश्चित होना चाहिए – प्रतिज्ञा-पत्र में यह स्पष्ट रूप से उल्लेखित होना चाहिए कि धन को चुकाने का दायित्व किसका है। अन्यथा प्रतिज्ञा-पत्र को वैध नहीं माना जा सकता है। यदि प्रतिज्ञा-पत्र के लेखक एक से अधिक हैं तो उन्हें संयुक्त एवं पृथक् रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

(7) भुगतान प्राप्त करने वाला व्यक्ति निश्चित होना चाहिए – प्रतिज्ञा-पत्र में भुगतान की प्रतिज्ञा एक निश्चित व्यक्ति को ही चाहिए। प्रतिज्ञा-पत्र में उसका नाम, पद, पेशा, कार्य इत्यादि लिखा होना अनिवार्य है।

(8) भुगतान देश की वैधानिक मुद्रा में होना चाहिए - भुगतान देश की प्रचलित वैधानिक मुद्रा के रूप में ही होना चाहिए। माल देने की प्रतिज्ञा, प्रतिज्ञा-पत्र के क्षेत्र से बाहर है।

(9) **बैंक नोट एवं करेन्सी प्रतिज्ञा-पत्र नहीं है** – बैंक नोट एवं करेन्सी नोट प्रतिज्ञा-पत्र की परिभाषा के क्षेत्र से बाहर हैं।

(10) **अन्य औपचारिकताएँ –** क्रम संख्या तारीख, स्थान एवं प्रतिफल सम्बन्धी औपचारिकताएँ लेखपत्र में पाई जाती है परन्तु ये सभी उसकी वैधानिकता को प्रभावित नहीं करती है।

प्रतिज्ञा-पत्र का नमूना निम्न है –

Rs. 500 New Delhi

May 30, 1995

STAMP

On demand (or three months after date), I promise to pay Shri Nand Kishore or Order, the sum of Rupees Five Hundred only, for value received.

For XYZ Industries
Panna Lal
Manager

3.4 विनिमय-पत्र (Bill of Exchange) – विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम की धारा 5 के अनुसार, "विनिमय-पत्र बिना शर्त का एक लिखित आज्ञा पत्र है, जिसमें लिखने वाला किसी व्यक्ति विशेष को आज्ञा देता है कि वह एक निश्चित धन या तो स्वयं उसे या उसकी आज्ञानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या उस पत्र के वाहक के माँगने पर या एक निश्चित अवधि के बाद दे दे।"

विनिमय-पत्र के लक्षण :

विनिमय-पत्र के मुख्य लक्षण निम्नलिखित है –

(1) एक विनिमय पत्र लिखित होना चाहिए।

(2) यह धनराशि को चुकाने का एक आदेश होना चाहिए अनुरोध नहीं।

(3) यह शर्त रहित होना चाहिए।

(4) इस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होने चाहिए।

(5) जिस व्यक्ति पर विनिमय-पत्र लिखा गया है अथवा उसका नाम निश्चित होना चाहिए।

(6) राशि भी निश्चित होनी चाहिए।

(7) भुगतान चालू मुद्रा में होना चाहिए।

(8) इस पर निश्चित मूल्य की स्टॉम्प (Stamp) भी लगी होनी चाहिए।

(9) इस पर स्वीकृति होना अनिवार्य है।

(10) इस पर तिथि तथा स्थान भी लिखा होना चाहिए।

(11) विपत्र में, "मूल्य प्राप्त हो गया है" (Value Received) भी लिखा होना चाहिए। यद्यपि वैधानिक दृष्टि से यह अनिवार्य नहीं है।

विनियम-पत्र के पक्षकार

विनिमय-पत्र के निम्नलिखित पक्षकार होते हैं -

1. विनिमय-पत्र को लिखने वाला अर्थात लेखक (Drawer)।
2. जिसके ऊपर विनिमय-पत्र लिखा जाता है अर्थात् देनदार (Drawee)
3. जो रूपया पाने वाला है अर्थात् लेनदार (Payee)

विनिमय-पत्र के प्रकार :

विनिमय-पत्र के भेदों को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है -

(A) समय की दृष्टि से

(A) समय की दृष्टि से बिल दो प्रकार का होता है -

(1) **मांग बिल (Demand Bill)** – ऐसा बिल जिसका भुगतान स्वीकर्त्ता को प्रस्तुत करते ही करना पड़ता है।

(2) **मुदती बिल (Tenure Bill)** – ऐसा बिल जिसका भुगतान एक निश्चित अवधि के बीत जाने के पश्चात् करना होता है।

(B) स्थान की दृष्टि से :

स्थान की दृष्टि से बिल दो प्रकार के होते हैं -

(1) **देशी बिल (Inland Bill)** – वह बिल जो भारत देश की सीमाओं के भीतर लिखा गया है, देशी बिल कहलाता है। इस बिल के सभी पक्षकार भारत में ही रहते हैं।

(2) **विदेशी बिल (Foreign Bill)** – वह बिल जो देश की सीमाओं के बाहर लिखा जाता है, विदेशी बिल कहलाता है। इस बिल के सभी पक्षकार अलग-अलग देशों में रहते हैं।

(C) पाने वाले की दृष्टि से :

पाने वाले की दृष्टि से भी बिल निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं -

(1) **वाहक बिल (Bearer Bill)** – वह बिल जिनका भुगतान किसी भी व्यक्ति को जो भुगतान के लिये प्रस्तुत कर दें, दे दिया जाता है, वाहक बिल कहलाता है।

(2) **आदेश बिल (Order Bill)** – वह बिल जिसका भुगतान उसी व्यक्ति को जिसको नाम बिल में लिखा हो या उसके आदेशानुसार होता है, आदेश बिल कहलाता है।

(D) उद्देश्य की दृष्टि से :

उद्देश्य की दृष्टि से बिलों को निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है -

(1) **अनुग्रह बिल (Accommodation Bill)** – वह बिल, जो पारस्परिक सहायता के लिये लिखा जाये और उसमें वास्तविक प्रतिफल का अभाव हो।

(2) **व्यापारिक बिल (Trade Bill)** – व्यापारिक कार्यों के लिये प्रयोग होने वाला बिल जिसमें प्रतिफल का होना आवश्यक है।

(3) **प्रलेखी विदेशी बिल (Document Foreign Bill)** – वह बिल जो जहाजों बिल्टी, बीजक व बीमा इत्यादि प्रलेखों के साथ जुड़ा रहता है, प्रलेखी विदेशी बिल कहलाता है।

3.5 चैक (Cheque) :

भारतीय विनिमय साध्य लेखपत्र अधिनियम की धारा 6 के अनुसार, "चैक एक ऐसा विनिमय-पत्र है जो किसी विशेष बैंक पर लिखा जाता है और स्पष्ट रूप से माँग किये जाने के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार देय नहीं होता। अर्थात् केवल मांग पर ही देय होता है। चैक एक शर्तरहित तथा लिखित आदेश है जो कि किसी खास बैंक पर लिखा जाता है जिस पर लेखक के हस्ताक्षर होते हैं और जो बैंक को केलव रूपयों की एक साथ रकम किसी व्यक्ति को या उसके अधिकारित व्यक्ति को या पत्र के धारक को माँगने पर अदा करने की आज्ञा देती है।

चैक की विशेषताएँ :

उपरोक्त परिभाषा से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि चैक की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं -

(1) यह एक आज्ञा पत्र है।

(2) इसमें बैंक को रूपया देने का आदेश होता है।

(3) यह आदेश शर्तरहित होता है।

(4) यह आदेश लिखित होना चाहिए।

(5) यह केवल विशेष बैंक पर उसी व्यक्ति द्वारा लिखा जाता है जिसका खात उस बैंक में होता है।

(6) चैक हस्ताक्षर युक्त होना चाहिए।

(7) इसमें भुगतान के लिये एक निश्चित धनराशि होनी चाहिए।

(8) चैक का भुगतान मांगने पर होना चाहिए।

(9) चैक का भुगतान चैक के ऊपर लिखे व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार ही होना चाहिए।

चैक के पक्ष (Parties of a Cheque)

चैक से सम्बन्धित निम्नलिखित तीन पक्षकार है -

(1) **लेखक (Drawer)** – यह वह व्यक्ति हो जो चैक लिखता है अर्थात् जिसका धन बैंक में जमा होता है।

(2) **देनदार (Drawee)** – वह व्यक्ति जो धन का भुगतान करता है, देनदार कहलाता है। चैक का भुगतान बैंक करता है। इसलिए बैंक देनदार होगा।

(3) **लेनदार (Payee)** – वह व्यक्ति जो चैक के रूपये का भुगतान पाने का अधिकारी होता है लेनदार कहलाता है। कभी-कभी लेखक व लेनदार एक ही व्यक्ति भी हो सकते हैं। यदि लेखक ने चैक स्वयं (Self) पर लिखा है।

3.6 चैक का अनादरण (Dishonour of a Cheque) :

निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक चैक का भुगतान करने को इंकार कर सकता है -

(A) ऐसी दशाएँ जब बैंक को भुगतान के लिये अवश्य मनाही कर देनी चाहिये।

1. जब ग्राहक भुगतान के लिये इंकार कर देता है।
2. जब बैंक को ग्राहक की मृत्यु की सूचना मिल जाती है।
3. जब ग्राहक दिवालिया हो जाता है।
4. जब बैंक को ग्राहक के पागल होने की सूचना मिल जाती है।
5. जब न्यायालय द्वारा भुगतान रोक दिया जाता है।
6. जब ग्राहक अपने खाते को किसी दूसरे के नाम में बदलने की सूचना बैंक को भेज देता है।
7. जब बैंक को ग्राहक की ओर से हिसाब जमा करने की सूचना मिल जाती है।

(B) ऐसी दशाएँ जब बैंक भुगतान के लिये चाहे तो मना कर सकता है :

1. जब ग्राहक के खाते में पर्याप्त धन न हो।
2. जब चैक पर छः माह से अधिक पुरानी तिथि पड़ी हुई हो।
3. जब चैक में कोई वैधानिक सन्देह हो।
4. यदि चैक में अंकों व शब्दों में लिखी रकम में अन्तर हो।
5. यदि चैक में कोई परिवर्तन करके उस पर लेखक के हस्ताक्षर न हो।
6. यदि चैक कटा-फटा हो।
7. यदि चैक लिखने वाले के हस्ताक्षर, हस्ताक्षर पुस्तक में दिये गये हस्ताक्षर से भिन्न हो।
8. जब चैक उचित रूप से प्रस्तुत नहीं किया जाता।
9. जब चैक ऐसी शाखा पर प्रस्तुत कर दिया जाये जहाँ ग्राहक का खाता न हो।
10. जब चैक पर बेचान नियमानुकूल न हो।
11. जब बैंक में संयुक्त हिसाब हो और चैक पर सब लोगों ने संयुक्त रूप से हस्ताक्षर न किये हों।

चैक का रेखांकन (Crossing of Cheque) :

धन प्राप्त करने वाले हितों की रक्षा करने का ढंग चैक का रेखांकन है। चैक के एक कोने में दो तिरछी समानान्तर रेखाएँ खींचने का चैक का रेखांकन कहते हैं। रेखांकन चैक के लिये एक आदेश होता है कि चैक का भुगतान बैंक की खिड़की (Counter) पर न किया जाए और धन प्राप्त करने वाले के खाते में बैंक में लिखी धनराशि जोड़ दी जाएं। यदि ऐसे चैक का भुगतान बैंक की खिड़की पर कर दिया जाता है और भुगतान प्राप्त करने वाला असली लेनदार न हो, तो बैंक को असली लेनदार का पुनः भुगतान करना होगा। रेखांकन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है।

1. **साधारण रेखांकन –** धारा 123 के अनुसार जब किसी चैक पर दो समानान्तर रेखाएँ खींच दी जाती है था उन रेखाओं के अन्दर "& Co. शब्द भी लिख दिये जाते हैं तो यह साधारण रेखांकन कहलाता है।

2. **विशेष रेखांकन –** धारा 124 के अनुसार जब किसी चैक पर दो समानान्तर रेखाएँ खींच दी जाती और उसके बीच में किसी विशेष बैंक का नाम भी दिया जाता है तो रेखांकन को विशेष रेखांकन कहते हैं और इसका अर्थ यह होता है कि इस चैक का भुगतान केवल उसी बैंक से होता है जिसका नाम रेखाओं के अन्दर लिखा हुआ है।

3. **प्रतिबन्धक रेखांकन –** कुछ बैंकों एवं व्यापारियों द्वारा चैक की जोखिम को कम करने के लिये रेखांकन के उपरोक्त दो ढंग के अतिरिक्त एक यह तीसरा ढंग भी अपनाया गया है। जिसके अन्तर्गत समानान्तर रेखाओं के बीच कुछ और शब्दों का उपयोग किया जाता है, जैसे- "Account Payee या "Account Payee only"। प्रतिबन्ध रेखांकन चैक के हस्तांतरण में कोई रुकावट नहीं डालता। इस रेखांकन में भुगतानकर्त्ता बैंक को यह आदेश देता है कि लेखक इस चैक का भुगतान उसी बैंक में करना चाहता है जिसमें देनदार (Payee) का खाता है।

3.7 प्रतिज्ञा-पत्र एवं विनिमय पत्र में अन्तर

अन्तर का आधार	प्रतिज्ञा-पत्र	विनिमय-पत्र
1. पक्षकार	इसमें दो पक्षकार होते हैं – लेखक एवं देनदार।	इसमें तीन पक्षकार होते हैं – लेखक, लेनदार एवं देनदार।
2. व्यक्ति	इसमें लिखित राशि स्वयं प्रतिज्ञाकर्ता को नहीं चुकाई जा सकती है।	इसमें लेखक एवं लेनदार एक ही व्यक्ति हो सकता है।
3. वचन एवं आदेश	एक आदेश इसमें धन चुकाने का शर्तरहित वचन होता है।	इसमें धन चुकाने का शर्तरहित आदेश होता है।
4. स्वीकृति	इसमें स्वीकृति आवश्यक नहीं होती है क्योंकि इस पर वही व्यक्ति हस्ताक्षर करता है जिस पर धन चुकाने का दायित्व होता है।	इस पर स्वीकृति आवश्यक होती है क्योंकि यह उस व्यक्ति द्वारा नहीं लिखा जाता है जिस पर धन चुकाने का दायित्व होता है।
5. दायित्व	इसमें लिखने वाले का दायित्व प्राथमिक एवं पूर्ण होता है।	इसमें लिखने वाले का दायित्व सहायक एवं सशर्त होता है।
6. सम्बन्ध	इसमें लेखक का सीधा सम्बन्ध लेनदार से होता है।	किसी स्वीकृति विनिमय व लेखक का लेनदार से सीधा सम्बन्ध नहीं होता है।
7. अनादरण	इसके अनादरित होने पर इसको सूचना देनी आवश्यक नहीं है।	इसके अनादरित होने पर इसकी सूचना उन सभी पक्षकारों को दी जानी आवश्यक है जिन पर भुगतान का दायित्त्व होता है।

8. भुगतान	इसकी राशि वाहक को देय नहीं हो सकती है।	इसकी राशि का भुगतान वाहक को देय हो सकता है।
9. प्रतियाँ	इसकी केवल एक ही प्रति बनाई जाती है।	विदेशी विनिमय-पत्रों की तीन प्रतियाँ बनाई जाती है।

3.8 चैक एवं विनिमय-पत्र में अन्तर

चैक और विनिमय-पत्र में निम्नलिखित अन्तर है -

अन्तर का आधार	चैक	विनिमय-पत्र
1. लिखना	यह बैंक पर लिखा जाता है।	यह किसी व्यक्ति विशेष पर जिनमें बैंक भी शामिल है, लिखा जाता है।
2. अनुग्रह दिन	इसमें भुगतान के लिए अनुग्रह दिन नहीं दिए जाते हैं।	इसमें भुगतान के लिये अनुग्रह दिन के तीन दिन दिए जाते हैं।
3. टिकट	इस पर टिकट लगाना आवश्यक नहीं है।	यदि विनिमय-पत्र मुद्दती है तो उस पर टिकट लगाना आवश्यक नहीं होता है।
4. भुगतान	इसका भुगतान मांग पर किया जाता है।	इसका भुगतान मांग पर या अवधि बीतने पर किया जाता है।
5. रेखांकन	इसे रेखांकित किया जा सकता है।	इसे रेखांकित नहीं किया जा सकता है।
6. प्रतियाँ	चैक की केवल एक ही प्रति तैयार की जाती है।	विनिमय-पत्र की कई प्रतियाँ तैयार की जाती है।
7. स्वीकृति	इसमें स्वीकृति आवश्यक नहीं है।	इस पर देनदार की स्वीकृति आवश्यक है।
8. प्राप्त हुआ मूल्य	चैक के अन्त में "प्राप्त हुआ मूल्य" नहीं लिखा जाता है।	विनिमय-पत्र पर "प्राप्त हुआ मूल्य" लिखा होता है।
9. दायित्व से मुक्ति	यदि भुगतान तिथि पर भी इसे बैंक के सामने पेश न किया जाए तब भी लेखक अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता।	इसकी दशा में यदि इसे भुगतान तिथि पर भुगतान के लिये प्रस्तुत नहीं किया जाता तो विनिमय-पत्र का स्वीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।
10. सूचना	इसके अप्रतिष्ठित होने पर सूचना देना आवश्यक नहीं होता है।	इसके अप्रतिष्ठित होने पर सूचना देना आवश्यक नहीं होता है।

3.8.1 वाहक चैक व आदेश चैक में अन्तर :

वाहक चैक व आदेश चैक में निम्नलिखित अन्तर है-

अन्तर का आधार	वाहक चैक	आदेश चैक
1. Bearer of Order शब्द	इस प्रकार के चैक में पाने वाले के नाम के आगे or Bearer शब्द लिखा होता है।	इस प्रकार के चैक में पाने वाले के नाम के आगे or Order शब्द लिखा होता है।
2. भुगतान	इस चैक का भुगतान कोई भी व्यक्ति प्राप्त कर सकता है।	इस चैक का भुगतान केवल वहीं व्यक्ति प्राप्त कर सकता है जिसका नाम बैंक पर होता है या उसके आदेशानुसार हो सकता है।
3. सुरक्षा	यह असुरक्षित है।	यह सुरक्षित है।
4. आवश्यकता	इस चैक के लिये सही व्यक्ति को भुगतान करना बैंक के लिये आवश्यक नहीं होता।	इस प्रकार के चैक में बैंक का कर्त्तव्य है कि वह सही व्यक्ति को भुगतान करें।
5. स्वामित्व हस्तांतरण	इस प्रकार के चैक का यदि स्वामित्व हस्तान्तरित करना हो तो मात्र सुपुर्दगी से ही किया जा सकता है, दूसरे शब्दों में इसका बेचान आवश्यक नहीं है।	इस चैक के स्वामित्व का हस्तांतरण करते समय बेचान आवश्यक है।

3.8.2 सामान्य रेखांकन तथा विशेष रेखांकन में अन्तर :

(Difference between General Crossing and Special Crossing) :

वाहक चैक व आदेश चैक में निम्नलिखित अन्तर है-

अन्तर का आधार (Basis of Difference)	साधारण रेखांकन (General Crossing)	विशेष रेखांकन (Special Crossing)
1. उद्देश्य (Objective)	इसका उद्देश्य चैक को सुरक्षित बनाना है।	इसका उद्देश्य चैक को अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित बनाना है।
2. शब्दों का प्रयोग (Use of Words)	इसमें दो समानान्तर रेखाओं के बीच शब्दों का प्रयोग भी किया जा सकता है और नहीं भी।	इसमें दो समानान्तर रेखाओं के मध्य किसी निश्चित बैंक का नाम लिखना परम आवश्यक है। अतएव इसे रिक्त छोड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता।

3. भुगतान (Payment)	साधारण रेखांकन की दशा में किसी बैंक द्वारा चैक का भुगतान प्राप्त किया जा सकता है।	इसमें चैक का भुगतान उसी बैंक से प्राप्त किया जा सकता है जिसका कि नाम रेखांकन के बीच लिखा हो।

3.8.3 चैक विनिमय-विपत्र और प्रतिज्ञा-पत्र में तुलना :
(Comparison among Cheque, Bill of Exchange and Promissory Note) :

इस तीन पत्रों में कुछ बातें समान हैं तथा कुछ बातें एक-दूसरे से भिन्न है, जो इस प्रकार है -

1. समानता (Similarity) :

तीनों पत्रों में बहुत सी बातें समान है जो इस प्रकार है :-

(i) तीनों पत्र लिखित होते हैं और उनके बनाने वालों द्वारा हस्ताक्षर किये होते हैं।

(ii) तीनों पत्र रूपयों से ही देय होते हैं - किसी अन्य रूप में नहीं।

(iii) तीनों ही पत्र शर्त रहित होते हैं।

(iv) तीनों ही पत्रों में लिखित रकम एक निश्चित रकम होती है।

(v) तीनों ही पत्र केवल निश्चित व्यक्ति या निश्चित व्यक्ति के आदेशानुसार या वाहक को देय होते हैं। अन्य किसी को नहीं।

2. भिन्नता (Difference)

तीनों पत्रों में बहुत सी बातें भिन्न हैं :-

अन्तर का आधार (Basis of Difference)	चैक (Cheque)	विनिमय-विपत्र (Bill of Exchange)	प्रतिज्ञा-पत्र (Promissory Note)
1. पक्षकार (Parties)	इसमें तीन पक्ष होते हैं - लिखने वाले, पाने वाला व देने वाला (बैंक)।	इसमें भी तीन पक्ष होते हैं - लिखने वाला, पाने वाला व देने वाला (कोई भी व्यक्ति।)	इसमें दो पक्ष होते हैं - लिखने वाला व पाने वाला।
2. भुगतान का आदेश (Order of Payment)	वह रूपया चुकाने का आदेश होता है किन्तु हमेशा बैंक का ही।	यह भी रूपया चुकाने आदेश होता है- किन्तु किसी पर भी।	यह रूपया अदा करने की प्रतिज्ञा होती है, आदेश नहीं।
3. स्वीकृति	यह स्वीकृत नहीं होता केवल लिखने वाले के ही हस्ताक्षर होते हैं।	इसकी स्वीकृति देनदार से करायी जाती है।	इसकी भी स्वीकार नहीं कराया जाता।

4. अवधि (Period)	यह मांग पर देय होता है।	यह दर्शनी व मुद्दती होता है।	यह भी दर्शन व मुद्दती होता है।
5. चलन (Circulation)	यह भीतरी चलन के काम आता है।	यह भीतरी चलन के अतिरिक्त विदेशी ऋण चुकाने में भी काम आता है।	यह भीतरी चलन में काम आता है।
6. रेखांकन (Crossing)	इसे रेखांकित किया जा सकता है।	इसे रेखांकित नहीं कर सकते।	इसे भी रेखांकित नहीं कर सकते।
7. गलती (Mistake)	इसमें यदि गलती हो जाए तो बैंक नहीं देगा।	इसमें यदि गलती होने पर भी देनदार ने स्वीकार कर लिया है तो उसको भुगतान देने के लिये बाध्य किया जा सकता है।	इसमें गलती होने पर देनदार को बाध्य किया जा सकता है।
8. प्रस्तुत न किये जाने पर दायित्व (Liability if not presented in due courses)	यदि चैक के उपस्थित करने में देरी हो जाये तो इससे लेखक व बेचान करने वाले अपने दायित्व से मुक्त नहीं होते। यदि बैंक ही फेल हो जाए तो दूसरी बात है।	विपत्र यदि ठीक तिथि पर उपस्थित न किया जाए तो अन्य व्यक्ति अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं।	इसमें भी देनदार अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है।

3.9 विनिमय साध्य विलेख-पत्र धारी (Holder of a Negotiable Instrument) :

विनियम साध्य विलेख-पत्र के सम्बन्ध में धारी तीन प्रकार का हो सकता है-

(Difference between General Crossing and Special Crossing) :

1. धारी (Holder)
2. मूल्य के लिये धारी (Holder for value)
3. यथाविधि धारी (Holder in due course)

1. धारी (Holder)

धारा 8 के अनुसार किसी विनिमय साध्य लेखपत्र यदि धारक वह व्यक्ति होता है जो वैधानिक रूप से उसे अपने पास रखने तथा भुगतान तिथि पर उसका भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी हो। इससे स्पष्ट हो जाता है कि लेखपत्र का अधिकार किसी व्यक्ति के पास पहुँचना ही, उसे लेखपत्र का धारक नहीं बना देता। अर्थात् लेखपत्र उसके पास पहुँचते ही वह धारक कहलाएगा ऐसी बात नहीं है। अपने नाम से लेखपत्र को रखने का अधिकार प्राप्त करना ही धारक को वैधानिक धारक बनाता है।

2. मूल्य के लिये धारी (Holder for value) :

यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसे विनिमय साध्य लेखपत्र का धारी है जिसका मूल्य पहले किसी समय दिया जा चुका है तो वह 'मूल्य' के लिये धारी कहलाता है।

3. यथाविधि धारी (Holder in due course) :

यथाविधि धारक का आशय ऐसे व्यक्ति से है जो प्रतिफल के बदले में विलेख से लिखित धन देय होने से पहले तथा इस विश्वास के लिये पर्याप्त कारण न रखते हुए कि जिस व्यक्ति से उसने स्वत्व (Title) प्राप्त किया था। उसके स्वत्व में कोई दोष विद्यमान था, किसी प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय-पत्र अथवा चैक को प्राप्त करता है यदि वह वाहक को देय है अथवा उसका आदाता या पृष्ठांकिती हो जाता है यदि वह आज्ञा पर देय है।

यथाविधिधारी के अधिकार (Rights of Holder in due Course) :

एक यथा विधि धारक को कुछ विशेष अधिकार प्राप्त होते हैं जो इस प्रकार है :

1. यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को स्टाम्पयुक्त अपूर्ण विलेख-पत्र पर हस्ताक्षर करके सुपुर्द कर देता है तो वह यथाविधि धारक के विरुद्ध उत्तरदायी बना रहता है।
2. विनिमय साध्य विलेख के पूर्व पक्षकार यथाविधि धारक के प्रति इस समय तक दायी रहते हैं। जब तक कि विलेख यथोचित रूप से संतुष्ट नहीं कर दिया जाता।
3. जब कोई विलेख बनावटी या कल्पित नाम से लिखा गया है और उसी व्यक्ति द्वारा बेचान किया गय है तो वह यथाविधि धारक के विरुद्ध यह नहीं कह सकता कि लेखपत्र को लिखने वाला कल्पित था।
4. किसी विनिमय साध्य विलेख पर दायी व्यक्ति यथाविधिधारी के विरुद्ध यह नहीं कह सकता है कि विलेख उससे खो गया था अथवा उससे कपट द्वारा या अन्य किसी अपराध द्वारा या अवैध प्रतिफल के बदले प्राप्त किया गया था।
5. प्रतिज्ञा-पत्र लिखने वाला अथवा आज्ञा-पत्र देय विनिमय-पत्र का स्वीकर्त्ता, यथाविधिधारी के वाद प्रस्तुत करने पर आदाता की पृष्ठांकन करने की क्षमता को नकार नहीं सकते अर्थात् उसे अस्वीकार नहीं कर सकते।

इस प्रकार जब तक कि विपरीत सिद्ध न कर दिया जाए, न्यायालय यह मानेगा कि किसी विलेख का धारी यथाविधिकारी है तथा एक बार यथाविधि धारी के हाथों से गुजरते ही विलेख समस्त दोषों से मुक्त हो जाता है।

3.10 अनादरण या अप्रतिष्ठा (Dishonour) :

कोई विनिमय साध्य विलेख अनादरित हुआ कहा जाता है जबकि उसका आहार्थी (देनदार) उसको स्वीकार करने अथवा उसका भुगतान करने से इन्कार कर देता है। यह अनादरण दो प्रकार का हो सकता है।

1. अस्वीकृति द्वारा अनादरण।
2. भुगतान न किये जाने के कारण अनादरण।

1. अस्वीकृति द्वारा अनादरण : एक विनिमय-पत्र अस्वीकृति द्वारा अनादरित निम्न परिस्थितियों में कहा जाता है।

(i) जबकि इसका आहार्थी (बहुत से अहार्यों की दशा में उनमें से कोई एक) विनिमय पक्ष को स्वीकार करने में त्रुटि करता है, अर्थात् प्रस्तुत करने पर 48 घण्टे के भीतर स्वीकृति न दे अथवा स्वीकार करने से इंकार कर दे।

(ii) जबकि प्रस्तुति करने की आवश्यकता न हो और विनिमय-पत्र स्वीकार न किया गया हो।

(iii) जबकि आहार्थी अनुबन्ध करने की क्षमता नहीं रखता, अथवा

(iv) जबकि मर्यादित स्वीकृति दी गयी है।

2. **भुगतान न करने पर अनादरण :** एक प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय-पत्र या चैक उस समय भुगतान न करने के कारण अनादरित हुआ कहा जाता है जबकि प्रतिज्ञा-पत्र का लेखक, विनिमय-पत्र का स्वीकर्ता या चैक का आहार्थी प्रस्तुति द्वारा भुगतान की मांग किये जाने पर भुगतान करने में त्रुटि करता है।

अनादरण का प्रभाव (Effect of Dishonour) :

विलेख के सभी बेचान करने वाले एवं आहर्ता विलेख के धारक के प्रति उत्तरदायी है यदि विलेख अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न किये जाने के कारण अनादरित कर दिया जाए, बशर्ते कि वह उनको ऐसे अनादरण की सूचना देता है। विलेख का आहर्यी केवल उस समय उत्तरदायी होता है जब अनादरण भुगतान न किये जाने द्वारा हो।

अनादरण की सूचना (Notice of Dishonour) :

जब एक विलेख अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न किये जाने के द्वारा अनादरित कर दिया जाता है तो ऐसे विलेख के धारक को सभी पक्षों के नाम अनादरण की सूचना भेजनी चाहिए जिनकों वह उत्तरदायी ठहराना चाहता है।

नोटिंग तथा प्रोटेस्ट (Noting and Protest) :

जब किसी प्रतिज्ञा-पत्र या विनिमय-पत्र का अनादरण अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न किये जाने के कारण होता है तब विलेख का धारक अनादरण की उचित सूचना देने के पश्चात् उसके आहर्ता या बेचानकर्ता पर वाद प्रस्तुत करने का अधिकारी होता है। जब कोई प्रतिज्ञा-पत्र या विनिमय-पत्र अस्वीकृति द्वारा या भुगतान होने के कारण अनादरित हो जाए तो उसका धारक नोटरी पब्लिक द्वारा विलेख पर ऐसे अनादरण को नोट करवा सकता है। ऐसा नोटिंग विलेख पर अथवा उससे नत्थी पत्र पर करवाया जा सकता है।

प्रोटेस्ट (Protest) :

जब अनादरण को नोटरी पब्लिक के पास नोट करवा दिया जाता है तो नोटरी पब्लिक से प्राप्त किये हुए प्रमाण पत्र को प्रोटेस्ट कहते हैं। इस प्रकार प्रोटेस्ट पर ऐसा प्रमाण-पत्र है जो कि अनादरण के तथ्य को प्रमाणित करता है और वह अनादरण के सम्बन्ध में किये गए नोटिंग के आधार पर तैयार किया जाता है।

हुण्डियां :

हुण्डी भी विनिमय साध्य लेखपत्र के समान ही भारत में व्यवसायियों के बीच प्रचलित है। यह बहुत पुरानी शैली तथा महाजनी भाषा में लिखी जाती है। यह पत्र व्यवहार के समान ही लिखी जाती है। हुण्डी का उद्देश्य विनिमय बिल के उद्देश्य जैसा ही है, यद्यपि कभी-कभी हुण्डी प्रतिज्ञापत्र का भी काम करता है। वास्तव में हुण्डी पर बिल की तरह ही स्टाम्प लगा रहता है। इसका पराक्रामण (negotiation) स्वीकृति तथा अधिकार का हस्तांतरण भी बिल की तरह होता है। प्रायः इसका भुगतान करने, ऋण देने तथा रूपयों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये किया जाता है। प्रायः हुण्डियाँ व्यापारिक सामान्य विधान एवं व्यापारिक रीति-रिवाज द्वारा नियंत्रित होती है।

हुण्डियों के भेद (Types of Hundies) : निम्नलिखित हुण्डियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझी जाती है :

1. **दर्शनी हुण्डी :** उसे कहते हैं जो दर्शन पर या मांग पर देय हो। ऐसी हुण्डी के धारक का यह कर्त्तव्य है कि वह उसे यथोचित समय में देनदार के सम्मुख प्रस्तुत करे।
2. **मुद्दती या मियादी या मिती हुण्डी :** उसे कहते हैं जो निश्चित अवधि के बाद देय हो।
3. **धनीचोग हुण्डी :** उसे कहते हैं जो हुण्डी में लिखे हुए व्यक्ति या इसके धारक या इसके स्वामी को देय हो।

4. **नामजोग या फरमानजोग :** उसे कहते हैं जो हुण्डी में दिये गये नाम वाले व्यक्ति को ही देय हो। नामजोग हुण्डी में लेनदार का नाम लिखा रहता है। नामजोग हुण्डी की रकम लेनदार के आदेशानुसार किसी व्यक्ति को देय होती है। इसे बिल की तरह पृष्ठांकित किया जा सकता है।

5. **शाहजोग हुण्डी :** उसे कहते हैं जो किसी शाह या प्रतिष्ठित व्यक्ति को देय हो। शाह ऐसे व्यक्ति को कहते हैं जिसका नाम व्यापारिक क्षेत्र में सर्वविदित रहता है, जो किसी स्थानीय बोर्ड के द्वारा समय-समय पर प्रकाशित होती है। शाह-जोग हुण्डी का भुगतान हुण्डी में लिखे शाह को मिलता है या उसके आदेशानुसार किसी व्यक्ति को मिलता है।

6. **धनजोग या देखनहार हुण्डी :** उसे कहते हैं जो दिखाने वाले अर्थात् वाहक को देय हो। दर्शनी हुण्डी देखनहार हुंडी नहीं हो सकती।

7. **जोखिमी हुण्डी :** यह प्राचीन काल में प्रचलित थी। इसके अनुसार, माल का विक्रेता क्रेता के नाम में जोखिमी हुण्डी लिखकर उसे माल ले जाने वाले वाहक को दे देता था तथा इसका भुगतान माल के पहुँचने पर ही किया जाता था। इस हुण्डी में दो सुविधाएँ प्राप्त होती थी - (क) लेखक (drawer) को इसका रूपया पृष्ठांकन के बाद मिल जाता था; तथा (ख) माल का बीमा भी हो जाता था, क्योंकि विक्रेता हुण्डी को बीमादार के हाथ बीमा के लिये उसका प्रीमियम काट कर उस कीमत पर बेच देता था। अत: यह हुण्डी आजकल के बिल, बिल्टी, बीमापत्र तथा गिरवी पत्र (Letter of hypothecation) चारों का काम करती थी।

8. **जवाबी हुण्डी :** उसे कहते हैं जिसके द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर किसी बैंक की सहायता से रूपया भेजा जाता है। इसके अन्तर्गत धन प्राप्त करने वाले व्यक्ति द्वारा प्रेषक को यह जवाब भेजना होता है कि उसने धन प्राप्त कर लिया है।

हुण्डी विषय के कुछ प्रचलित शब्द :

(1) **जिक्री चिट (Zikri Chit) –** जब हुण्डी अप्रतिष्ठित हो जाती है अथवा अप्रतिष्ठित होने का संदेह रहता है, तो हुण्डी का लेखक या अन्य कोई पक्षकार धारक को एक सुरक्षापत्र देता है। यह पत्र शहर के किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के नाम लिखा जाता है और इसमें उसे इस बात का आदेश दिया जाता है। कि अप्रतिष्ठित होने पर प्रतिष्ठा के लिये वह इसका भुगतान कर दे। यह बिल 'प्रतिष्ठा के लिये स्वीकर्ता' (acceptor for honour) से मिलता-जुलता है, परन्तु परिपक्वता के बाद अप्रतिष्ठित होने पर इसका प्रोटेस्ट या नोटिंग नहीं कराना पड़ता है। इसी सुरक्षा-पत्र को जिक्री चिट कहते हैं।

(2) **पुर्जा (Purja) –** एक प्रकार का पत्र है जो ऋण के लिये कोई व्यक्ति किसी महाजन के नाम लिखता है और उसमें लिखित रकम का ऋण देने का उससे अनुरोध करता है। इसके लिखने का उद्देश्य ऋण लेना ही होता है। इसका व्यवहार विनिमय-साध्य लेखपत्र की तरह नहीं होता है। इस पर एक रसीदी टिकट भी लगता है। यह अस्थायी ऋण के लिये प्रयुक्त होता है।

(3) **पेठ एवं परपेठ (Peth and Perpeth) –** हुण्डी के खो जाने पर धारक आहर्ता से उसकी दूसरी प्रति देने को कह सकता है। इस द्वितीय प्रति को पेठ और द्वितीय प्रति की प्रति को परपेठ कहते हैं।

(4) **खोखा (Khokha) –** जब हुण्डी का भुगतान करके रद्द कर दी जाए तो यह खोखा कहलाती है।

हुण्डी के दोष अथवा सीमित प्रयोग के कारण -

1. इसकी तिथि और लिखावट की शैली अत्यन्त प्राचीन है एवं इसको समझने में बहुत कठिनाई होती है।

2. सभी तरह की हुण्डियां विनिमय साध्य लेखपत्र की तरह व्यवहार में नहीं लायी जा सकती है। उदाहरणार्थ, हुण्डी का बट्टा (discounting) किसी बैंक से नहीं कराया जा सकता है।

4. सारांश (Summary)

विनिमय साध्य लेखपत्र से तात्पर्य किसी प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय बिल अथवा चैक से है जो कि आदेशित व्यक्ति अथवा वाहक को देय हो। सामान्यतया ये विलेख-पत्र लिखित होते हैं, इनमें प्रतिफल का उल्लेख नहीं होता, ये वाहक या आदेशानुसार भुगतान किये जाते हैं। विनिमय-पत्र एक शर्तरहित आज्ञा पत्र होता है जिसमें लिखने वाला किसी विशेष व्यक्ति को आज्ञा देता है कि वह एक निश्चित धन या तो स्वयं उसे या उसकी आज्ञानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या उस पत्र के वाहक को मांगने पर या एक निश्चित अवधि के बाद दे दे। इसके तीन पक्षकार - लेखक, देनदार तथा लेनदार हो सकते हैं। विनिमय-पत्र मांग या मुद्दती या देशी या विदेशी या वाहक या आदेश में से किसी भी प्रकार का हो सकता है। चैक एक ऐसा विनिमय-पत्र है जो किसी विशेष बैंक पर लिखे जाता है और स्पष्ट रूप से मांग किये जाने के अतिरिक्त किसी प्रकार से देय नहीं होता। यह भी वाहक या आदेशानुसार भुगतान के योग्य होता है। सुरक्षा की दृष्टि से चैक का रेखांकन संभव होता है जो कि सामान्य अथवा विशेष प्रकार का हो सकता है। इसी तरह से प्रतिज्ञा पत्र एक निश्चित पत्र होता है जिस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होते हैं वह और किसी व्यक्ति को उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या वाहक को एक निश्चित धनराशि चुकाने का वचन देता है। चैक, प्रतिज्ञा-पत्र तथा विनिमय-पत्रों में अलग-अलग आधारों पर अन्तर किया जा सकता। विनिमय विपत्रों का अनादरण अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न किये जाने पर होता है। ऐसी स्थिति में धारक को नोटिंग तथा प्रोटेस्ट की कार्यवाही करनी होती है। विनिमय विपत्रों के धारी तीन प्रकार के हो सकते हैं जैसे धारक, मूल्य के लिये धारी तथा यथाविधिधारी। इनमें यथाविधि धारी एक विशेष अधिकारों वाला व्यक्ति माना जाता है। इसी संदर्भ में विनिमय-पत्र का एक पुराना रूप हुण्डी है जिसका प्रयोग आज भी देश के कुछ हिस्से में किया जाता है। हुण्डी भी विनिमय-पत्र (BIE) की तरह विभिन्न प्रकार की हो सकती है।

5. प्रस्ताविक पुस्तकें (Suggested Readings) :

1. Mercantile Law : Dr. Avtar Singh
2. Mercantile Law : Dr. N.D. Kapoor
3. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा : नौलखा
4. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा : डॉ. एस. एस. शुक्ल
5. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा : डॉ. एस. सी. अग्रवाल
6. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा : डॉ. अशोक शर्मा
7. व्यावसायिक नियम की रूपरेखा : डॉ. आर. सी. चावला

6. नमूने के लिये प्रश्न (Sample Questions) :

1. विनिमय साध्य विलेख-पत्र की परिभाषा दीजिए तथा उन आधारभूत लक्षणों का वर्णन करें जो विनिमय साध्य लेखपत्र को साधारण मात्र से भिन्न बताते हैं।
2. प्रतिज्ञा-पत्र की परिभाषा दीजिए तथा विनिमय-पत्र से इसकी तुलना कीजिए। चैक के रेखांकन से आप क्या समझते हैं ?
3. यथाविधिधारी की परिभाषा दीजिए। यथाविधिधारी के विशेष अधिकारों का वर्णन कीजिए।
4. चैक के रेखांकन का क्या प्रभाव होता है। क्या एक चैक का जिस पर अपस्क्राम्य रेखांकन लिखा हुआ है, बेचान तथा परक्रामण हो सकता है।
5. चैक, प्रतिज्ञा-पत्र तथा विनिमय-पत्र में अन्तर स्पष्ट करें।

Paper : BC-201 Business Laws **Revised by : Sh. Parveen Khurana**

Lesson No : 10

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986

(Consumer Protection Act, 1986)

अध्याय की रूपेरखा (Contents of the Chapter)

1. परिचय (Introduction)
2. अध्याय के उद्देश्य (Objective of Chapter)
3. विषय का प्रस्तुतीकरण
    - 3.1 उद्देश्य (Objectives)
    - 3.2 विस्तार, प्रस्ताव एवं लागू करण
    - 3.3 संशोधन
        - 3.3.1 उपयुक्त प्रयोगशाला
        - 3.3.2 उपभोक्ता विवाद
        - 3.3.3 कमी
        - 3.3.4 उपभोक्ता
        - 3.3.5 परिवादी
        - 3.3.6 सेवाएँ
        - 3.3.7 अप्रमाणिक माल या सेवाएँ
        - 3.3.8 दोष
        - 3.3.9 शिकायत
        - 3.3.10 कमी
    - 3.4 उपभोक्ता संरक्षण परिषद
        - 3.4.1 केन्द्रीय परिषद के उद्देश्य
        - 3.4.2 राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद या राज्य परिषद
        - 3.4.3 जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद
    - 3.5 उपभोक्ता विवादों का समाधान
        - 3.5.1 जिला फोरम का गठन
        - 3.5.2 जिला मंच का अधिकार क्षेत्र
        - 3.5.3 शिकायत प्रस्तुत करने का तरीका
        - 3.5.4 शक्तियाँ
    - 3.6 राज्य आयोग का गठन
        - 3.6.1 अधिकारिता
    - 3.7 राष्ट्रीय आयोग का गठन
        - 3.7.1 अधिकारिता
        - 3.7.2 विवाद निपटारे की शक्ति
4. सारांश
5. प्रस्तावित पुस्तकें
6. नमूने के लिए प्रश्न

परिचय (Introduction)

वर्तमान अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता व्यावसायिक जगत का केन्द्र बिन्दु है। आज के युग में प्रत्येक वस्तु का उत्पादन तथा विपणन उपभोक्ता की इच्छानुसार किया जा रहा है। उपभोक्ता को बाजार का राजा माना जाता है तथा प्रत्येक व्यवसाय की सफलता उपभोक्ता की सन्तुष्टि पर निर्भर करती है। आज का प्रत्येक पुराने समय के उपभोक्ता की तुलना में अधिक जागृत है तथा वह अपने अधिकारों के बारे में भी जानता है। उपभोक्ता को शोषण से बचाने के लिए सरकार भी इस दिशा में प्रयासरत है तथा समय-समय पर विभिन्न कानून बनाती है जैसे खाद्य मिलावट अधिनियम 1954, पैकेज्ड वस्तु नियमन आदेश 1975, वॉट एवं माप (प्रवर्तन) अधिनियम 1985 इत्यादि। परन्तु इन सब के पश्चात् भी समाज में उपभोक्ता का शोषण किसी न किसी तरह से होता ही रहता है जैसे कभी कम मापतौल के कारण भी कभी वस्तु की घटिया किस्म के कारण, कभी मिलावट करके, तो कभी नकली वस्तुएँ उपलब्ध करवाकर, कभी वस्तुओं की जमाखोरी अथवा कालाबाजारी करके आदि। नि:सन्देह सरकार इस दिशा में आवश्यक प्रत्यन करती है परन्तु इसके पश्चात् भी उपभोक्ता को उसके अधिकार नहीं मिल पाते हैं तथा इसके लिये उसे अनावश्यक रूप से लम्बी कानूनी लड़ाई लड़नी पड़ती है। इन सभी कारणों से उपभोक्ता को सरल, प्रभावी तथा कम समय में न्याय दिलवाने के लिये 1986 में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम को लागू किया गया। इसका वास्तविक उद्देश्य उपभोक्ता के आधारभूत अधिकारों व हितों को समस्त सुरक्षा प्रदान करना, उन्हें शोषण से मुक्ति दिलवाना तथा उपभोक्ता चेतना, उपभोक्ता शिक्षा व उपभोक्ता संरक्षण है।

2. अध्याय का उद्देश्य (Objectives of Chapter) :

इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य पाठकों को उपभोक्ता शब्द से भली-भाँति परिचित करवाना है। उपभोक्ता के अधिकारों तथा इसके संरक्षण के लिए वर्तमान समय में सरकार द्वारा लागू किये गये विभिन्न नियमों की आधारभूत जानकारी पाठकों को देना इस अध्याय के उद्देश्यों का एक हिस्सा है। लेकिन इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की उत्पत्ति, क्षेत्र तथा विस्तार की जानकारी पाठकों को देना है। यह तभी सम्भव है जब उन्हें इस अधिनियम में प्रयोग की जाने वाली शब्दावली के अर्थों की जानकारी हो जो उन्हें यहाँ उपलब्ध करवाई गई है। उपभोक्ता, शिकायत, शिकायतकर्त्ता, उपभोक्ता विवाद, दोष, कमी, जैसे शब्दों के विशेष अर्थ पाठकों को बताने व समझाने का प्रयास किया गया। उपभोक्ता का शोषण किन-किन तरीकों से किया जाता है वे बातें पाठकों को बताने व समझाने का प्रयास किया गया है तथा एक उपभोक्ता के क्या-क्या अधिकार होते हैं। यह भी पाठकों को समझाया गया है। इसके अतिरिक्त उपभोक्ता संरक्षण के लिये कार्यरत उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की पूर्ण जानकारी पाठकों तक पहुंचाना इस अध्याय का उद्देश्य है। इसी दिशा में उपभोक्ता विवादों के समाध ान के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में जो त्रिस्तरीय अर्द्ध न्यायायिक तन्त्र (Three-Tier Quasi Judicial Machinary) की स्थापना की गई है। उनकी स्थापना, संरचना, अधिकार क्षेत्र, शिकायत प्रस्तुत करने तथा निपटारे की विधि को यहाँ पाठकों को विस्तारपूर्वक ढंग से समझाने का प्रयास किया गया है। अत: संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् पाठक उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 से।

3. विषय का प्रस्तुतीकरण

उपभोक्ताओं के हितों के संरक्षण के लिए और इसके लिये उपभोक्ता परिषदों की तथा उपभोक्ता विवादों के निपटारे हेतु अन्य प्राधिकारियों की स्थापना करने के लिये और उससे सम्बन्धित विषयों के लिये उपलब्ध करने के लिये उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 लागू किया गया। यह अधिनियम दिनांक

1 जुलाई 1987 से समस्त भारत में (जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर) लागू हुआ। उक्त अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ताओं के विवादों को तय करने के उद्देश्य से जिला स्तर पर जिला फोरम (District Forum), राज्य स्तर पर राज्य आयोग (State Commission) तथा राष्ट्रीय आयोग (National Commission) की स्थापना की गई। उक्त अधिनियम उस तिथि से लागू माना जाएगा जो केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचना जारी करके नियत की जाए। इसके अतिरिक्त विभिन्न राज्यों में एवं विभिन्न प्रावधानों के लागू होने के लिये भी केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूयना जारी करके तिथियाँ नियत की जा सकती है।

3.1 उद्देश्य (Objectives)

इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता हितों की अत्यन्त कारगर ढंग से रक्षा करने का बेहतरीन प्रयास किया गया है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए एवं उपभोक्ताओं की शिकायतों एवं उनसे सम्बन्धित विवादों का निपटारा करने के लिए उपभोक्ता परिषदों एवं अन्य प्राधिकारियों की स्थापना के सम्बन्ध में भी इस अधिनियम में आवश्यकतानुसार प्रावधान किये गये हैं।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, उपभोक्ता के 6 हितों की पहचान करता है, जो इस प्रकार है –

1. ऐसे उत्पादों के विपणन के विरुद्ध (Against) उपभोक्ता अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करना जो जीवन या सम्पत्ति हेतु खतरनाक (Hazardous) है।
2. उपभोक्ता को उत्पाद की किस्म, मात्रा, शुद्धता (Potency) मानक एवं मूल्यों के सम्बन्ध में प्रदान की जाने वाली सूचना के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करना।
3. जहाँ तक कि हो सके, उत्पाद की विभिन्न किस्मों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर उनके मूल्यों के सम्बन्ध में उपभोक्ता को आश्वस्त (Assure) करना।
4. उपभोक्ता के अधिकारों तथा हितों को संरक्षित (Protected) करने हेतु उपभोक्ता परिषदों (Consumer Councils) की स्थापना करना।
5. उपभोक्ता विवादों एवं इससे सम्बन्धित मामलों की सुनवाई एवं शीघ्र समाधान निपटारे हेतु पर्याप्त व्यवस्था करना एवं
6. उपभोक्ता विवादों के समाधान हेतु अर्द्ध–न्यायिक व्यवस्था (Quasi-Judicial Machinary) की स्थापना करना।

3.2 विस्तार, आरम्भ एवं लागू करण (Extent, Commencement and Application)

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, जम्मू एवं कश्मीर राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत पर लागू होता है।

सामान्यतया केन्द्रीय सरकार द्वारा जारी अधिसूचना के अनुसार यह अधिनियम सभी वस्तुओं तथा सेवाओं पर लागू होगा। इसके अन्तर्गत निजी, सार्वजनिक या सहकारी, सभी क्षेत्रों को शामिल किया गया है। इस प्रकार से इस अधिनियम के अधीन खराब या दोषयुक्त वस्तु या घटिया सेवा के विरुद्ध, उपभोक्ता कार्यवाही कर सकता है, भले ही वह वस्तु या सेवा सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा प्रदान की गई हो अथवा रेलवे, टेलीफोन, एयर लाइन्स या फिर बैंक इत्यादि द्वारा प्रदान की गई हो।

3.3 संशोधन (Amendment)

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में वर्ष 2002 में संशोधन किया गया है। ये संशोधन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं विस्तृत प्रकृति के हैं। संशोधन अधिनियम 2002 उपभोक्ता न्यायालयों को पहले से कहीं अधिक

विस्तृत अधिकार प्रदान करता है तथा उनके क्षेत्र में भी फैलाव किया है। संशोधित उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की प्रमुख बातें निम्न हैं :

	वर्तमान क्षेत्राधिकार (Present Jurisdiction)	संशोधित क्षेत्राधिकार (Revised Jurisdiction)
1. जिला न्यायाधिकरण/मंच (District Forums)	5,00,000 रुपये से कम	20,00,000 रुपये से कम
2. राज्य अयोग (State Commission)	5,00,000 रुपये से 20,00,000 रुपये तक	20,00,000 रुपये से 1 करोड़ तक
3. राष्ट्रीय आयोग (National Commission)	20,00,000 रुपये से अधिक	1,00,00,000 रुपये से अधिक

सभी उपभोक्ता न्यायालयों के सदस्यों (Members) की योग्यता में भी बदलाव लाया गया है तथा उन्हें निम्न रूप से निर्धारित किया गया है।

1. सदस्य एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसने किसी भी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त की हो।
2. सदस्य की आयु 35 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए।
3. अब सदस्य भी पुन: नियुक्ति के योग्य है।
4. 50 प्रतिशत से ज्यादा न्यायिक पृष्ठभूमि (Judicial Background) के नहीं होंगे।
5. नई उपभोक्तासंरक्षण परिषदों (Consumer Protection Councils) का गठन अधिनियम की धारा 8A के अधीन किया जाएगा।
6. राष्य व राष्ट्रीय आयोग की सर्किट बैंचे (Circuit Benches) जब राज्य की राजधानियों के अलावा राज्यों से भी अपना कार्य सम्पन्न कर सकेंगी।
7. न्यायालय अन्तरिम आदेश (Interim Order) जारी कर सकते हैं तथा उसमें बदलाव भी कर सकते हैं।

इस अध्याय में आगे बढ़ने से पहले इस अधिनियम में वर्णित कुछ मुख्य परिभाषाओं को जान लेना अत्यन्त आवश्यक है ताकि इस अधिनियम के वास्तविक उद्देश्यों, विवादों की वास्तविक प्रकृति, परिवाद योजित करने वाला वास्तविक व्यक्ति आदि से सम्बन्धित समस्त महत्त्वपूर्ण राज्यों का ज्ञान हो सके। उन परिभाषाओं में से कुछ निम्नलिखित है :

3.3.1 उपयुक्त प्रयोगशाला (Appropriate Laboratory)

उक्त शब्द का अभिप्राय है ऐसा कोई भी संगठन अथवा प्रयोगशाला जिसे केन्द्रीय सरकार द्वारा मान्यता दी गई हो। इसके अन्तर्गत ऐसी प्रयोगशालाओं एवं संगठनों को भी शामिल किया गया है जिन्हें या तो केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा–

(a) सहायता प्रदान की जा रही हो।

(b) वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही हो।

(c) संचालित किया जा रहा हो जिनकी स्थापना देश में लागू किसी भी कानून के अन्तर्गत की गई हो एवं इनका उद्देश्य प्राप्त हुये उत्पाद से सम्बन्धित कमियों एवं दोषों को खोजना, उनका विश्लेषण करना (Analysis) एवं परीक्षण (Examination) करना हो [धारा 2(1)(a)]

3.3.2 उपभोक्ता विवाद (Consumer Dispute)

जब शिकायत कर्त्ता द्वारा आरोप पत्र में दर्ज किये गये आरोपों को मानने से दूसरा पक्ष इंकार कर देता है या उन आरोपों से असहमति व्यक्त करने के कारण जो 'विवाद' (Dispute) उत्पन्न होता है। उसे इस अधिनियम के अन्तर्गत 'उपभोक्ता विवाद' के नाम से जाना जाता है।

3.3.3 कमी (Deficiency)

इसका तात्पर्य है किस्म, प्रकृति एवं प्रयोग विधि से सम्बन्धित कोई खराबी, अपूर्णता, कमी या अपर्याप्तता (Defect, Unperfection or Short Coming) जिसकी पूर्ति इस अधिनियम या देश में प्रचलित किसी भी अन्य कानून के प्रावधानों हेतु आवश्यक है। [धारा 2(1)(g)]

कमी शब्द की परिभाषा के दो भाग हैं। पहला वह जिसमें सेवा सम्बन्धी मानकों का कानून द्वारा निर्धारण किया गया है तथा दूसरा जिसमें सम्बन्धित व्यक्ति द्वारा स्पष्ट आश्वासन या प्रत्याभूति अथवा गारन्टी दी गई है। निष्पादन के गुणों को कानून द्वारा निर्धारित स्तर पर बरकरार रखने में असफलता अथवा दिये गये आश्वासनों के अनुसार सेवाएँ प्रदान करने में असफलता कमी की ओर संकेत करती है।

बैंक द्वारा खाते में पर्याप्त कोष होने के पश्चात् भी चैक की अनावरण कर देना एक भयंकर भूल है तथा सेवा में कमी का सूचक है। इसी प्रकार से आरक्षण (Reservation) प्राप्ति के पश्चात् भी सीट उपलब्ध न करवाना सेवा में कमी का प्रतीक है किन्तु बैंक द्वारा ऋण को स्वीकृत करने से इंकार कर देना सेवा में कमी का सूचक नहीं है।

3.3.4 उपभोक्ता (Consumer)

1. ऐसा व्यक्ति जिसने मूल्य चुका कर या मूल्य चुकाने का वायदा करके या आंशिक रूप से मूल्य का भुगतान कर और आंशिक मूल्य को, अदा करने का वायदा करके या किसी अन्य रूप में मूल्य की अदायगी को स्थगित करके, कोई माल खरीदा हो तो वह उपभोक्ता कहलाएगा। उक्त व्यक्ति के अतिरिक्त ऐसा कोई अन्य व्यक्ति भी उपभोक्ता कहलाएगा जिसने उक्त माल को खरीददार के अनुमोदन से प्रयोग किया हो परन्तु एक ऐसा व्यक्ति जिसने उक्त माल दुबारा बेचने या किसी वाणिज्यिक प्रयोजन (Commercial Pupose) के लिए खरीदा हो, उपभोक्ता की परिभाषा में नहीं आएगा।

परन्तु वर्ष 1993 में उक्त अधिनियम में किए गये संशोधन के अनुसार क्रेता खरीदे गये माल का उपयोग केवल अपने स्वरोजगार के साधन के रूप में जीविकोपार्जन हेतु किये जाने की दशा में उक्त उपयोग वाणिज्यिक प्रयोजन (Commercial Purpose) की श्रेणी में नहीं आएगा।

2. ऐसा व्यक्ति जिसने मूल्य चुकाकर या मूल्य चुकाने का वायदा करके या आंशिक रूप से मूल्य का भुगतान करके और आंशिक मूल्य को अदा करने का वायदा करके या किसी अन्य रूप से मूल्य की

अदायगी को स्थगित करके, कोई सेवाएँ किराये पर प्राप्त की हों या उपयोग की हों उपभोक्ता कहलाएगा। उक्त व्यक्ति के अतिरिक्त ऐसा कोई अन्य व्यक्ति जो उक्त सेवाओं का उक्त उपभोक्ता के अनुमोदन से लाभार्थी हो, भी उपभोक्ता की परिभाषा में आएगा। लेकिन इसमें ऐसा व्यक्ति सम्मिलित नहीं है जो ऐसी सेवाओं की किसी वाणिज्यिक प्रयोजन के लिये उपयोग में आता है।

वाणिज्यिक प्रयोजन के अन्तर्गत स्वरोजगार के साधन के द्वारा जीविकोपार्जन के एक मात्र उद्देश्य के लिए माल का क्रय करने वाला और उपयोग करने वाला और सेवाओं का उपयोग करने वाला व्यक्ति शामिल नहीं है।

3.3.5 परिवादी (Complainant)

परिवादी का तात्पर्य है (क) कोई उपभोक्ता या (ख) कोई स्वैच्छिक उपभोक्ता संगठन जो कम्पनीय एक्ट (1956) या तत्समय प्रभावी किसी अन्य कानून के अन्तर्गत पंजीकृत हो अथवा (ग) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार जो कोई परिवाद योजित करता है (घ) वर्ष 1993 के संशोधन द्वारा एक या एक से अधिक उपभोक्ताओं जहाँ उन सभी उपभोक्ताओं का एक जैसा हित हो भी परिवादी की परिभाषा में सम्मिलित किए गए हैं (ड) उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) अधिनियम 2002, द्वारा उपभोक्ता की मृत्यु हो जाने की दशा में उसके विधिक उत्तराधिकारी या प्रतिनिधि को भी परिवादी की परिभाषा में सम्मिलित कर लिया गया है।

3.3.6 सेवाएँ (Services)

सेवा का अर्थ किसी भी प्रकार की सेवा से है जो उसके सम्भावित प्रयोगकर्त्ताओं को प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत बैंककारी, वित्त पोषण, वीमा, परिवहन, प्रसंस्करण विद्युत या अन्य ऊर्जा की सप्लाई बोर्ड या निवास अथवा दोनों (गृह निर्माण) मनोरंजन, आमोद-प्रमोद या समाचार या अन्य सूचना देने के सम्बन्ध में सुविधाओं का प्रबन्ध भी आता है लेकिन यह सीमित नहीं है परन्तु इसके अन्तर्गत नि:शुल्क (Free of Charge) या व्यक्तिगत सेवा संविदा (Contract of Personal Service) के अधीन दी गई सेवाएँ नहीं आएंगी।

3.3.7 अप्रमाणिक माल या सेवाएँ (Spurious Goods or Services)

अप्रमाणिक माल या सेवाओं से तात्पर्य ऐसे माल या सेवाओं से है जिसके असली होने का दावा किया जाता है, परन्तु वस्तुत: वे ऐसी नहीं होती हैं।

3.3.8 दोष (Defect)

दोष का अर्थ है किसी माल की क्वालिटी, मात्रा, शक्ति, शुद्धता या मानक जिसे अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा के अन्तर्गत या किसी विधि द्वारा या उसके अधीन बनाए रखना जरूरी है या जिसका ऐसे किसी माल के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से व्यापारी द्वारा दावा किया जाता है में कोई दोष, अपूर्णता या कमी।

3.3.9 शिकायत (Complaint)

शिकायत, शिकायतकर्त्ता द्वारा लगाया गया वह आरोप लिखित है तो उसने इस अधिनियम के अन्तर्गत उपलब्ध सहायता या राहत प्राप्त करने के लिये लगाया है। ऐसा आरोप निम्नलिखित में से किसी भी प्रकार का हो सकता है :

(a) किसी व्यापारी द्वारा कोई अनुचित व्यापार या प्रतिबन्धात्मक व्यापार (Unfair or Restrictive Trade Practice) किया गया है।

(b) उसके द्वारा क्रया किया गया माल या वह माल जिसके क्रय का ठहराव किया गया है एक या अधिक दोषों से ग्रस्त है।

(c) उसके द्वारा किराये पर ली गई या प्राप्त की गई सेवाएँ अथवा ये सेवाएँ जिनको किराये पर लेने या प्राप्त करने का ठहराव किया है, में किसी प्रकार की कमी या दोष है।

3.3.10 कमी (Deficiency)

देश में प्रचलित किसी राजनियम के अन्तर्गत अथवा किसी अनुबन्ध के अधीन या किसी भी अन्य प्रकार से किसी भी वस्तु की किस्म प्रकृति आदि के सम्बन्ध में अथवा किसी सेवा के निष्पादन के सम्बन्ध में कोई विधि जिसे बनाए रखना आवश्यक है उनमें कोई त्रुटि या अपर्याप्तता को कमी कहते हैं।

3.4 उपभोक्ता संरक्षण परिषद (Consumer Protection Councils)

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम (1986) के अन्तर्गत केन्द्र एवं राज्य स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों का गठन किया गया था लेकिन उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) अधिनियम (2002) के अन्तर्गत अब जिला स्तर पर भी उपभोक्ता संरक्षण परिषद के गठन का प्रावधान किया गया है। वर्तमान में अब निम्नलिखित उपभोक्ता संरक्षण परिषदें होंगे :

1. केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद (Central Consumer Protection Council)
2. राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद (State Consumer Protection Council)
3. जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद (District Consumer Protection Council)

उक्त अधिनियम के अनुसार केन्द्र सरकार अधिसूचना द्वारा किसी ऐसी तारीख से जो अधिसूचना में बताई गई हो केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद के रूप में एक परिषद् का गठन करेगा। जिसे आगे चलकर केन्द्रीय परिषद् के नाम से सम्बोधित किया जाएगा। उक्त केन्द्रीय परिषद् का गठन निम्न सदस्यों द्वारा होगा।

(a) सभापति वह व्यक्ति जो केन्द्र सरकार में उपभोक्ता मामलों का भार साधक मन्त्री होगा।

(b) ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सरकारी या गैर सरकारी सदस्यों को उतनी संख्या जो केन्द्र सरकार द्वारा नियत की जाए।

(c) केन्द्रीय परिषद् का अधिवेशन एक साल में कम से कम एक बार ऐसे स्थान व समय पर होगा जिसे सभापति उचित समझे।

3.4.1 केन्द्रीय परिषद् के उद्देश्य (Objectives of Central Council) (धारा-6)

केन्द्रीय परिषद् का उद्देश्य होगा उपभोक्ताओं के हितों एवं अधिकारों की रक्षा करना एवं उनका संवर्द्धन करना। उपभोक्ता के वे हित व अधिकार जिन्हें केन्द्रीय परिषद् ने अपने उद्देश्यों में शामिल किया है। इस प्रकार है :

(a) ऐसे उत्पादों के विपणन (Marketing) के विरुद्ध उपभोक्ताओं को संरक्षण या सुरक्षा देने के अधिकार जो जीवन के लिये अथवा सम्पत्ति के लिये नुकसानदेह साबित हो सकते हैं।

(b) विभिन्न उत्पादों एवं सेवाओं की किस्म, मात्रा, प्रभावी उत्पादकता, शुद्धता प्रमाण एवं उनके मूल्यों सम्बन्धी सूचना प्राप्त करने का अधिकार ताकि उपभोक्ताओं को अनुचित व्यापार व्यवहार से सुरक्षा प्रदान की जा सके।

धारा 8 के अनुसार राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद् के उद्देश्यों का वर्णन धारा 7 में किया गया है तथा ये वही उद्देश्य है जो धारा 6 में केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद् हेतु निर्धारित किये गये हैं।

3.4.2 राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद् या राज्य परिषद् (The State Consumer Protection Council or State Council)

राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद् के सम्बन्ध में प्रमुख प्रावधान निम्नानुसार है :

1. **स्थापना (Establishment) :** राज्य सरकार अधिसूचना जारी करके अपने राज्य में राज्य उपभोक्ता परिषद् की स्थापना कर सकती है। इस अधिसूचना में इसकी स्थापना की तिथि भी घोषित कर सकती है।

2. **उद्देश्य (Object) :** राज्य परिषद् का उद्देश्य राज्य के उपभोक्ताओं के अधिकारों का संरक्षण एवं संवर्द्धन करना होगा। उपभोक्ताओं के अधिकारों का वर्णन ऊपर केन्द्रीय परिषद् के उद्देश्यों (धारा 6) में किया जा चुका है।

3.4.3 जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद् (District Consumer Protection Council)

राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा ऐसी तारीख से जो वह ऐसी अधिसूचना में निर्दिष्ट करे प्रत्येक जिला के लिये जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद् के रूप में एक परिषद् का गठन करेगी। इस परिषद् को जिला परिषद् (District Council) के नाम से जाना जाएगा। इस परिषद् में निम्नलिखित सदस्य होंगे।

1. जिले का कलेक्टर इसका अध्यक्ष होगा।

2. ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले सरकारी या गैर सरकारी सदस्य जो राज्य सरकार द्वारा नियत की जाए।

जिला परिषद् की बैठक आवश्यकतानुसार बुलाई जाएगी लेकिन प्रतिवर्ष दो से कम बैठक नहीं की जाएगी। जिला परिषद् की बैठक उस समय व स्थान पर होगी जैसा अध्यक्ष उचित समझे एवं कार्य व्यवहार के बारे में ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाएगी जो राज्य सरकार द्वारा निर्धारित की जाए।

जिला परिषद् के उद्देश्य : प्रत्येक जिला परिषद् का उद्देश्य जिला के भीतर उन्हीं उपभोक्ता अधिकारों का संवर्द्धन और संरक्षण करना होगा जो केन्द्रीय परिषद् के उद्देश्यों के अन्तर्गत वर्णत है।

3.5 उपभोक्ता विवादों का समाधान (Redressal of Consumer Disputes)

उपभोक्ता की शिकायतों के समाधान के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में त्रिस्तरीय अर्द्ध–न्यायिक तन्त्र की व्यवस्था बन गई है जो निम्न प्रकार से है :

(a) जिला मंच (District Forum)

(b) राज्य आयोग (State Commission)

(c) राष्ट्रीय आयोग (National Commission)

3.5.1 जिला फोरम का गठन (Composition of District Forum)

प्रत्येक जिला स्तर पर जिला फोरम का गठन तीन सदस्यों से मिलकर होगा जिनमें से एक अध्यक्ष तथा दो सदस्य होंगे। अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होगा जो वर्तमान में जिला न्यायाधीश हो या इस पद पर रह चुका हो या होने के योग्य हो। अन्य दो सदस्य जिनमें से एक महिला होगी ऐसे व्यक्ति होंगे जिनमें निम्नलिखित योग्यताएँ होंगे।

(a) कम से कम 35 वर्ष की आयु होनी चाहिए।

(b) किसी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक उपाधि धारक होना चाहिए।

(c) योग्य, सत्यनिष्ठा और प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति होने चाहिए जिनको अर्थशास्त्र, विधि, वाणिज्य, लेखाकर्म, उद्योग लोककार्य या प्रशासन का पर्याप्त ज्ञान और उससे सम्बन्धित कार्य करने का कम से कम 10 वर्ष का अनुभव हो।

परन्तु कोई व्यक्ति सदस्य के रूप में नियुक्त किये जाने के योग्य नहीं होगा यदि वह

(क) किसी अपराध के लिये दोष सिद्ध और कारावास से दण्डित किया जा चुका है जो राज्य सरकार की राय में नैतिक अधमता (Moral Turpitude) को सम्मिलित करता है।

(ख) अनुन्मुक्त दिवालिया है या

(ग) मानसिक रूप से अस्वस्थ है या साक्षाम न्यायालय द्वारा इसके बारे में घोषणा विद्यमान है।

(घ) सरकार या सरकार के स्वामित्व या नियन्त्रण वाले किसी निगमित निकाय की सेवा से हटाया या पदच्युत किया जा चुका है।

(ड) राज्य सरकार की राय में ऐसा वित्तीय या अन्य वित्त प्राप्त कर लिया है जिससे सदस्य के रूप में उसके कार्य के प्रतिकूल ढ़ंग से प्रभावित होने की सम्भावना है।

(च) ऐसी अन्य अयोग्यताएँ जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएँ।

नियुक्ति : जिला फोरम के अध्यक्ष एवं दो अन्य सदस्यों की नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा निम्न सदस्यों वाले चयन समिति के अनुमोदन पर की जाती है।

(1) राज्य आयोग का अध्यक्ष (चयन समिति का सभापति)

(2) राज्य के विधि विभाग का सचिव (सदस्य)

(3) राज्य के उपभोक्ता मामलों के विभाग के प्रभार में होने वाला सचिव (सदस्य)

कार्यकाल : जिला फोरम का प्रत्येक सदस्य पांच वर्ष की अवधि के लिए या पैसठ वर्ष की आयु तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो पद धारण करेगा। सदस्य पांच वर्ष की एक और अवधि के लिए या पैंसठ वर्ष की आयु तक, जो भी पूर्वतर हो इस शर्त के अधीन कि वह नियुक्ति के लिए आवश्यक योग्यताओं एवं शर्तो को पूरा करता है, पुनर्नियुक्ति के लिए अर्ह होगा। ऐसी पुनर्नियुक्ति भी चयन आयोग की सिफारिश पर ही की जाएगी।

3.5.2 जिला मंच का अधिकार (Jurisdiction of District Forum)

1. इस अधिनियम के अन्य प्रावधानों के अन्तर्गत जिला मंच उन शिकायतों की सुनवाई कर सकेगा जिनमें वस्तुओं एवं सेवाओं की लागत तथा क्षमापूर्ति की राशि पांच लाख रुपये से अधिक नहीं है। उपभोक्ता संरक्षण संशोधन अधिनियम 2002 के अनुसार अब यह सीमा बढ़ाकर 20 लाख रुपये कर दी गई है।

2. एक जिला मंच में कोई शिकायत तब प्रस्तुत की जा सकेगी जबकि विरोधी पक्षकार अथवा एक से अधिक विरोधी पक्षकारों की दशा में प्रत्येक विरोधी पक्षकार शिकायत करते समय उस जिले के क्षेत्र में वास्तव में एवं स्वेच्छा से रहता हो अथवा व्यवसाय का संचालन करता हो।

3.5.3 शिकायत प्रस्तुत करने का तरीका

कोई शिकायत जिला मंच के पास अग्रलिखित में भी किसी के द्वारा प्रस्तुत की जा सकती है।

1. ऐसे उपभोक्ता द्वारा जिसे कोई माल बेचा तथा सुपुर्द किया गया है अथवा कोई माल बेचने या सुपुर्द करने का ठहराव किया गया है अथवा जिसे कोई सेवा प्रदान की गई है अथवा सेवा प्रदा करने का ठहराव किया गया है।

2. जिला मंच की अनुमति से कोई भी एक से अधिक उपभोक्ताओं द्वारा उन सब उपभोक्ताओं की ओर से जिनका सामान प्रकार का हित हो अथवा

3. केन्द्र अथवा राज्य द्वारा

3.5.4 शक्तियाँ (Powers)

जिला फोरम को परिवाद की सुनवाई करते समय निम्नलिखित विषयों के बारे में वहीं शक्तियाँ प्राप्त होंगे जो किसी व्यवहार न्यायालय को किसी वाद का विचारण करते समय प्राप्त होती है। अर्थात्

1. किसी प्रतिवादी को समन करना तथा हाजिर कराना और शपथ पर साक्षी की परीक्षा करना।

2. साक्ष्य के रूप में पेश किए जाने योग्य दस्तावेज या किसी अन्य तात्विक वस्तु का प्रकटीकरण और पेश किया जाएगा।

3. समुचित प्रयोगशाला या किसी अन्य सुसंगत स्रोत से सम्बन्धित विश्लेषण या परीक्षण के रिपोर्ट की मांग करना।

4. किसी साक्षी की परीक्षा के लिये कोई कमीशन निकालना।

3.6 राज्य आयोग का गठना (Composition of State Commission)

प्रत्येक राज्य आयोग का गठन तीन सदस्यों से मिलकर होगा जिनमें से एक अध्यक्ष तथा दो सदस्य होंगे। अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होगा जो वर्तमान में उच्च न्यायालय में है या रह चुका है। उसकी नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सलाह लेना जरूरी है। कम से कम दो अन्य सदस्य और सदस्यों की ऐसी संख्या से अधिक नहीं हो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए और जिनमें से एक महिला होगी जिनके पास निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए –

1. आयु 35 वर्ष से कम न हो।
2. मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि रखता हो।
3. योग्य, सत्यनिष्ठा और प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति हो जिनको अर्थशास्त्र, विधि, वाणिज्य, लेखाकर्म, उद्योग, लोककार्य या प्रशासन से सम्बन्धित समस्याओं का पर्याप्त ज्ञान और कम से कम 10 वर्ष का अनुभव हो।

3.6.1 अधिकारिता (Jurisdiction)

(क) राज्य आयोग की अधिकारिता ऐसे परिवादों को ग्रहण करने की होगी जहाँ माल या सेवाओं का मूल्य और दावा प्रतिकर यदि कोई है बीस लाख रुपये से अधिक है किन्तु एक करोड़ रुपये से अधिक नहीं है। इस राज्य के भीतर किसी जिला फोरम के आदेशों के विरुद्ध अपील ग्रहण करने का अधिकार राज्य आयोग को है।

(ख) किसी उपभोक्ता विवाद में जो जिला फोरम के समक्ष विचाराधीन है या तय हो चुका है जहाँ राज्य आयोग का ऐसा प्रतीत होता है कि जिला फोरम ने अपने क्षेत्राधिकार का विधि विरूद्ध तरीके से या अनियमितताओं के साथ प्रयोग किया है उस विवाद की पत्रावली को जिला फोरम से मंगाकर उससे उचित आदेश पारित करने की अधिकारिता है।

(ग) राज्य आयोग को ऐसे परिवादों की सुनवाई करने की अधिकारिता प्राप्त है जहाँ राज्य आयोग की स्थानीय सीमाओं की भीतर विरोधी पक्षकार या जहाँ एक से अधिक विरोधी पक्षकार है वहाँ विरोधी पक्षकार में से हर एक परिवाद दाखिल किए जाने के समय वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारोबार करता है अथवा शाखा कार्यालय है या लाभ के लिए स्वयं काम करता है।

3.7 राष्ट्रीय आयोग का गठन (Composition of National Commission)

राष्ट्रीय आयोग का गठन 5 सदस्यों से मिलकर होगा।

(क) अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति जो सर्वोच्च न्यायालय का वर्तमान में न्यायाधीश हो या रह चुका हो जिसकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा होगी तथा उसकी नियुक्ति सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सलाह के बिना नहीं हो सकती।

(ख) कम से कम चार अन्य सदस्य और सदस्यों की ऐसी संख्या से अधिक नहीं जो निर्धारित की जाए जिसमें एक महिला होगी के पास निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए।

(a) आयु 35 वर्ष से कम न हो।

(b) किसी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय द्वारा स्नातक की उपाधि रखता हो।

(c) योग्य, सत्यनिष्ठा और प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति हों जिनको अर्थशास्त्र, कानून, वाणिज्य, लेखाकर्म, उद्योग, लोककार्य या प्रशासन से सम्बन्धित समस्याओं का पर्याप्त ज्ञान हो और कम से कम 10 वर्ष का अनुभव हो।

3.7.1 अधिकारिता (Jurisdiction)

(क) राष्ट्रीय आयोग द्वारा एक करोड़ रुपये से अधिक सेवाओं, माल और क्षतिपूर्ति की परिवादों को ग्रहण करने तथा उसके अधीनस्थ किसी राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध दाखिल की गई अपील को ग्रहण करने व उनकी सुनवाई करने की अधिकारिता है।

(ख) किसी उपभोक्ता विवाद में किसी राज्य आयोग के समक्ष विचाराधीन है या तय हो चुका है जहाँ राष्ट्रीय आयोग को ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य आयोग ने अपने क्षेत्राधिकार की विधि विरुद्ध तरीके से या अनियमितताओं के साथ प्रयोग किया है उस विवाद के अभिलेखों को राज्य आयोग से मंगाकर उसमें उचित आदेश पारित करने की अधिकारिता है।

3.7.2 विवाद निपटारे की शक्ति (Power/Procedure of Setting disputes)

राष्ट्रीय आयोग को अपने समक्ष प्रस्तुत शिकायत के निपटारे के सम्बन्ध में भी नागरिक न्यायालय की वे सभी शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो इस अधिनियम की धारा 13 की उपधारा 4,5 तथा 6 में दी गई है।

राष्ट्रीय आयोग, केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाए गये नियमों के अनुरूप शिकायतों का समाधान करने की प्रक्रिया को अपनाता है। (धारा 22)

राष्ट्रीय आयोग द्वारा शिकायत निवारण के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 13(1) एवं 13(2) के अन्तर्गत जिला मंच द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया को ही आधार माना गया है। [धारा 14(7)]

अपील (Appeal)

यदि कोई व्यक्ति राष्ट्रीय आयोग के किसी आदेश से संतुष्ट नहीं है तो वह उस आदेश के विरुद्ध आदेश की तिथि के तीस दिनों के भीतर उच्चतम न्यायालय को अपील कर सकता है। उच्चतम न्यायालय इस अवधि के बाद भी अपील कर विचार कर सकता है। यदि वह इस अपील में अपील न करने के कारणों से संतुष्ट हो जाए।

4. सारांश (Summary) :

उपभोक्ता के हितों के संरक्षण के लिए, उपभोक्ता परिषदों की तथा उपभोक्ता विवादों के निपटारे हेतु अन्य प्राधिकारियों की स्थापना करने के लिए तथा उससे सम्बन्धित विषयों के लिए उपलब्ध करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 लागू किया गया। इसके मुख्य उद्देश्यों में उपभोक्ता का संरक्षण, जागृति, शिक्षा आदि है। अधिनियम उपभोक्ता के विभिन्न अधिकारों की पहचान करता है तथा उन्हें

लागू करवाने में उपभोक्ता की सहायता करता है। अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता, शिकायत, शिकायतकर्ता, उपभोक्ता विवाद, दोष, कमी, सेवाएँ, अप्रमाणिक माल या सेवाएँ जैसे शब्दों को विस्तारपूर्वक एवं प्रभावशाली ढंग से समझाया गया है जिससे उपभोक्ता को न्याय प्राप्त करने में किसी समस्या का सामना न करना पड़े। उपभोक्ता के संरक्षण के लिए सरकार की ओर से उपभोक्ता संरक्षण परिषद् कार्य करती हैं इसीलिए यहाँ केन्द्रीय, राज्य तथा जिला स्तर पर कार्य करने वाली उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की व्याख्या की गई है। उपभोक्ता संरक्षण के लिये जब कोई अपील करता है तो यह अपील कैसे की जानी, कहाँ की जानी है, शिकायत के निपटारे की विधि क्या होगी इसके लिये अध्याय में सरकार द्वारा स्थापित की गई त्रिस्तरीय अर्द्ध न्यायायिक तन्त्र का वर्णन किया है। ये स्तर जिला मंच, राज्य आयोग तथा राष्ट्रीय आयोग। प्रत्येक मंच तथा आयोग की अपनी-अपनी सीमाएँ तथा कार्यक्षेत्र सुनिश्चित किये गये हैं। इनका गठन, इसके सदस्यों की योग्यता, वेतन, शर्तें, कार्यकाल, कार्यशैली की प्रक्रिया, विवाद के निपटारे का ढंग, उसे लागू करने की क्रिया आदि सब बातों को यह अधिनियम विस्तारपूर्वक समझाता है। अत: उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के सभी प्रावधानों को विशेष रूप से तथा साधारण ढंग से समझाने का प्रयास इस अध्याय में किया गया है :

5. प्रस्ताविक पुस्तकें (Suggested Readings)

1. व्यवसायिक नियमन की रूपरेखा – Dr. R.C. Chawala
2. व्यवसायिक नियमन की रूपरेखा – Dr. Ashok Sharma
3. व्यवसायिक नियमन की रूपरेखा – Dr. S.C. Aggarwal
4. व्यवसायिक नियमन की रूपरेखा – नौलखा
5. Business Regulatory Framework – Dr. B.K. Goyal
6. Mercantile Law – Dr. N.D. Kapoor
7. Business Law – Rohini Aggarwal

6. नमूने के लिये प्रश्न (Sample Questions)

1. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम से आप क्या समझते हैं? इस अधिनियम के उद्देश्यों का वर्णन कीजिये।
2. उपभोक्ता संरक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व समझाइए। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के मुख्य प्रावधान क्या है?
3. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अन्तर्गत, जिला मंच द्वारा उपभोक्ता विवादों को निपटाने के लिए निर्धारित प्रक्रिया को स्पष्ट रूप से समझाइए।
4. राष्ट्रीय आयोग क्या है? उपभोक्ता विवादों के निपटारे के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अन्तर्गत दी गई व्यवस्थाओं का वर्णन कीजिए।

5. उपभोक्ता के हितों के संरक्षण व संवर्द्धन के लिए स्थापित केन्द्रीय परिषद् एवं राज्य परिषद की स्थापना, गठन एवं उद्देश्यों के बारे में वर्णन करें।

6. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अधीन माल एवं सेवाओं के लिए शिकायत निवारण प्रक्रिया समझाइए।

Paper : BC-201 Business Laws **Revised by : Sh. Parveen Khurana**

Lesson No : 11

विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम, 2000
(Foreign Exchange Management Act - 2000)

अध्याय की रूपेरखा (Contents of the Chapter)

1. परिचय (Introduction)
2. अध्याय के उद्देश्य (Objectives of Chapter)
3. विषय का प्रस्तुतीकरण
   - 3.1 अधिनियम का विस्तार एवं प्रभाव
     - 3.1.1 अधिनियम के उद्देश्य
     - 3.1.2 महत्त्वपूर्ण शब्दावली
     - 3.1.3 न्यायायिक अधिकारी
     - 3.1.4 अपील अधिकरण
     - 3.1.5 अधिकृत व्यक्ति
     - 3.1.6 पूँजी खाता लेन देन
     - 3.1.7 करेन्सी
     - 3.1.8 करेन्सी नोट
     - 3.1.9 चालू खाता लेन-देन
     - 3.1.10 निर्यात
     - 3.1.11 विदेशी करेन्सी
     - 3.1.12 विदेशी विनिमय
     - 3.1.13 विदेशी प्रतिभूति
     - 3.1.14 आयात
     - 3.1.15 भारतीय करेन्सी
     - 3.1.16 भारत के निवासी
     - 3.1.17 भारत के बाहर का निवासी व्यक्ति
     - 3.1.18 भारत को लौटाना
     - 3.1.19 प्रतिभूति

3.1.20 हस्तान्तरण

3.1.21 सभापति

3.1.22 व्यक्ति

3.1.23 भारत के बाहर निवासी

3.1.24 रिजर्व बैंक

3.1.25 सेवा

3.2 विदेशी विनिमय का नियन्त्रण एवं प्रबन्ध

3.3 अधिकृत व्यक्ति

3.4 अधिकृत व्यक्ति के निरीक्षण का रिजर्व बैंक का अधिकार

3.5 नियम का उल्लंघन एवं दण्ड

3.6 निर्णय एवं अपील

3.7 अपील न्यायाधिकरण सम्बन्धी नियम

3.8 लागू करने का निदेशालय

3.9 विविध

3.10 फेरा तथा फेमा में अन्तर

4. सारांश

5. प्रस्तावित पुस्तकें

6. नमूने के लिए प्रश्न

1. परिचय (Introduction)

आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के कारण वर्तमान समय में व्यापार में विदेशी विनिमय की आवश्यकता बहुत अधिक हो गई है। विदेशी विनिमय में किये जाने वाले व्यवहार तकनीकी होती है तथा उनके लिये विशेष रूप से बनाए गए नियमों का पालन करना अत्यन्त आवश्यक होता है। यद्यपि विदेशी व्यापार सम्बन्धी नीति का निर्धारण केन्द्रीय सरकार द्वारा किया जाता है परन्तु विदेशी व्यापार सम्बन्धी व्यवहारों पर नियन्त्रण रिजर्व बैंक द्वारा विदेशी विनिमय नियन्त्रण अधिनियम के अन्तर्गत किया जाता है। विदेशी विनिमय नियन्त्रण हेतु विधिवत् रूप से सर्वप्रथम 'विदेशी विनिमय नियम अधिनियम 1947' में पारित किया गया था परन्तु बाद में उसका स्थान विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम, 1974 ने ले लिया जिसे फेरा (FERA) के नाम से जाना जाता था। वैश्वीकरण के बढते प्रभाव के कारण इसे परिवर्तित करके 1994 में विदेशी विनिमय प्रबन्ध बिल के रूप में प्रस्तुत किया गया जिसे 9 दिसम्बर 1999 को राष्ट्रपति की सम्मति मिल गई तथा 1 जून 2000 से फेरा के स्थान पर 'विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम 1999' लागू कर दिया गया है जिसे फेमा (FEMA) के नाम से जाना जाता है।

2. अध्याय के उद्देश्य (Objectives of the Chapter)

इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य पाठकों की फेमा की उत्पत्ति की जानकारी देना, उसमें प्रयोग की जाने वाली विशेष शब्दावली के अर्थों से परिचित करवाना है। इसके अतिरिक्त फेमा की स्थापना के उद्देश्यों में भी पाठकों को भलीभांति परिचित करवाना अध्याय का उद्देश्य है। इसका मुख्य उद्देश्य विशेष रूप से पाठकों को विदेशी विनिमय का नियमन एवं प्रबन्ध के सम्बन्ध में लागू होने वाली सभी विशेष प्रावधानों से परिचित करवाना है। चालू खातों के लेन-देन, पूँजी खातों के लेन देन, भारत में निवासी व्यक्ति को करेन्सी, प्रतिभूति या अचल सम्पत्ति रखने का अधिकार, भारत के बाहर के निवासी व्यक्ति को भारतीय करेन्सी, प्रतिभूति तथा अचल सम्पत्ति रखने का अधिकार, विदेशी विनिमय की वसूला एवं प्रत्यावर्तन आदि जैसे नियमों से पाठक इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् परिचित हो पाएंगे। इसी प्रकार अधिकृत व्यक्ति की अवधारणा की जानकारी पाठकों के लिये उपलब्ध करवाई गई है। सरकार द्वारा फेमा का उल्लंघन की दशा में लागू किये जाने वाले 'उल्लंघन तथा दण्ड' सम्बन्धी प्रावधान पाठकों को समझाने का प्रयास किया गया है। इसी सम्बन्ध में निर्णय एवं पुर्नविचार पर पाठकों को जानकारी देने का उद्देश्य भी इस अध्याय में रखा गया है। इस प्रकार इस अध्याय का अध्ययन पाठकों को फेमा के सभी प्रावधानों की जानकारी उपलब्ध करवाएगा।

3. विषय का प्रस्तुतीकरण

आर्थिक उदारीकरण के युग में विदेशी विनिमय के बेहतर प्रबन्ध की आवश्यकता अनुभव की गई। फलत: विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम, 1973 की समीक्षा की गई। इसकी कमियों को ध्यान में रखकर इसे समाप्त करने का निर्णय किया गया तथा इसके स्थान पर विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम, 1999 पारित किया गया। इस अधिनियम को राष्ट्रपति को 9 दिसम्बर, 1999 को सम्मति मिल गई। इस अधिनियम को 'फेमा' (FEMA) के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। हम भी इस अध्याय में इसे 'फेमा' के नाम के स्थान से ही सम्बोधित करेंगे।

3.1 अधिनियम का विस्तार तथा प्रभाव (Extent and Application)

1. यह अधिनियम संपूर्ण भारत में लागू होता है।
2. यह भारत के निवासी किसी भी व्यक्ति के स्वामित्व अथवा नियन्त्रण वाली भारत के बाहर सभी शाखाओं, कार्यालयों तथा ऐजेन्सियों पर भी लागू होता है।
3. यह अधिनियम तब भी लागू होता है यदि कोई भारत का निवासी भारत के बाहर इस अधिनियम का उल्लंघन करता है।
4. यह अधिनियम उस तिथि से प्रभावी होगा जो तिथि केन्द्रीय सरकार द्वारा राजकीय बजट में अधिसूचना द्वारा निर्धारित की जायेगी। (धारा 1)

यह उल्लेखनीय है कि केन्द्रीय सरकार ने इस अधिनियम की अधिसूचना जारी कर 1 जून, 2000 से प्रभावी कर दिया था।

3.1.1 अधिनियम के उद्देश्य (Objectives)

'फेमा' के प्रमुख उद्देश्य निम्नानुसार है :-

1. विदेशी विनिमय से सम्बन्धित कानून को सुदृढ़ करना तथा उसमें संशोधन करना ताकि विदेशी व्यापार तथा भुगतान में सुविधा हो सके।

2. भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का सुव्यवस्थित विकास करना तथा उसे बनाये रखना।

3.1.2 महत्त्वपूर्ण शब्दावली (Important Terminnology)

'फेमा' में कुछ शब्दों का प्रयोग कुछ विशेष संदर्भ एवं अर्थ में किया गया है। इनका अर्थ निम्नानुसार ही होगा जब तक कि उसका संदर्भ किसी अन्यथा अर्थ में नहीं है :

3.1.3 न्यायिक अधिकारी/प्राधिकारी (Adjudicating Authority)

न्यायिक प्राधिकारी वह अधिकारी है जिसे धारा 16(1) के अधीन अधिकृत या प्राधिकृत किया गया है। (धारा 2(a))

3.1.4 अपील अधिकरण (Appellate Tribunul)

अपील न्यायाधिकरण या अधिकरण वह है जो विदेशी विनिमय हेतु धारा 18 के अधीन स्थापित किया गया है। (धारा 2(b))।

3.1.5 अधिकृत व्यक्ति (Authorised Person)

अधिकृत व्यक्ति से तात्पर्य किसी ऐसे अधिकृत व्यापारी, मुद्रा परिवर्तक, समुद्र-पार बैकिंग ईकाई या ऐसे ही किसी व्यक्ति से है जिसे धारा 10(1) के अधीन विदेशी विनिमय या विदेशी प्रतिभूतियों के लेन-देन हेतु अधिकृत किया गया है। (धारा 2(d))

3.1.6 पूँजी खाता सौदा/लेन-देन (Capital Account Transaction)

पूँजी खाते के लेन-देन से तात्पर्य उस लेन-देन या सौदे से है जो भारत के निवासी व्यक्तियों की भारत के बाहर सम्पत्तियों या दायित्वों या आकस्मिक दायित्वों को परिवर्तित करता है अथवा भारत के बाहर के निवासी व्यक्तियों की भारत में सम्पत्तियों या दायित्वों का परिवर्तन करता है। इसमें वे सौदे भी सम्मिलित हैं जो धारा 6(3) में उल्लेखित है। (धारा 2(e))।

3.1.7 करेन्सी/चल मुद्रा (Currency)

करेन्सी में सभी करेन्सी नोट, पोस्टल नोट, पोस्टल ऑर्डर, मनी ऑर्डर, चैक, ड्राफ्ट, यात्री चैक, साख पत्र, विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र, क्रेडिट कार्ड तथा ऐसे ही अन्य विलेख सम्मिलित हैं जिन्हें रिजर्व बैंक द्वारा अधिसूचित किया जायेगा। (धारा 2(h))

3.1.8 करेन्सी नोट (Currency Notes)

करेन्सी नोट में बैंक नोट तथा सिक्के शामिल है। (धारा 2(i))

3.1.9 चालू खाता लेन-देन (Current Account Transaction) :

चालू खाता लेन-देन से तात्पर्य पूँजी खाता लेन-देन के अतिरिक्त किसी लेन-देन से है जिसमें सामान्यत: निम्नांकित सम्मिलित हैं :

(i) विदेशी व्यापार, अन्य चालू व्यवसाय या सेवा तथा व्यवसाय के साधारण संचालन के दौरान अल्पकालीन बैकिंग या साख सुविधाओं के सम्बन्ध में देय भुगतान।

(ii) ऋणों पर ब्याज तथा निवेशों से शुद्ध आय के रूप में देय भुगतान।

(iii) विदेश में रह रहे माता-पिता, जीवन साथी तथा बच्चों के रहन-सहन के खर्चों के लिये भेजी जाने वाली धन राशि।

(iv) माता-पिता, बच्चों तथा जीवनसाथी की विदेश यात्रा, शिक्षा तथा चिकित्सा का व्यय। (धारा 2(j))

3.1.10 निर्यात (Export) : निर्यात से तात्पर्य :-

(i) किसी भी माल को भारत से भारत के बाहर किसी स्थान पर ले जाना तथा

(ii) भारत के बाहर किसी व्यक्ति को भारत से सेवाओं की व्यवस्था करना। (धारा 2(e))

3.1.11 विदेशी करेन्सी/चल मुद्रा (Foreign Currency)

विदेशी करेन्सी या चल मुद्रा से तात्पर्य भारत के अतिरिक्त किसी भी देश की करेन्सी से है। (धारा 2(m))

3.1.12 विदेशी विनिमय (Foreign exchange)

विदेशी विनिमय से तात्पर्य विदेशी करेन्सी से है तथा इसमें निम्नांकित सम्मिलित है -

(i) निक्षेप/जमाएँ, साख तथा शेष जो किसी भी विदेशी करेन्सी में देय है।

(ii) भारतीय मुद्रा में, भारत में लिखे ड्राफ्ट, यात्री चैक, साख पत्र अथवा विनिमय-पत्र किन्तु, जो किसी विदेशी करेन्सी में देय हैं।

(iii) भारत के बाहर बैंकों, संस्थाओं या व्यक्तियों द्वारा लिखे गये ड्राफ्ट, यात्री चैक, साख-पत्र अथवा विनिमय-पत्र किन्तु जो भारतीय करेन्सी में देय है। (धारा 2(n))

3.1.13 विदेशी प्रतिभूति (Foreign Security)

विदेशी प्रतिभूति से तात्पर्य किसी भी प्रतिभूति से है जो अंशों, स्कन्धों, बॉण्डों, ऋणपत्रों या अन्य किसी प्रपत्र के रूप में है अथवा जो विदेशी करेन्सी (मुद्रा) में अभिव्यक्त या मूल्यांकित (Denominated) है तथा इसमें से प्रतिभूतियाँ भी सम्मिलित हैं जो विदेशी मुद्रा में अभिव्यक्त है किन्तु जिनका शोधन या उन पर किसी प्रकार का प्रतिफल जैसे ब्याज या लाभांश भारतीय मुद्रा में देय है। (धारा 2(o))

3.1.14 आयात (Import) :

आयात से तात्पर्य भारत में किसी भी माल या सेवा को लाने से है। (धारा 2(p))

3.1.15 भारतीय करेन्सी/चल मुद्रा (Indian Currency)

भारतीय करेन्सी से तात्पर्य उस करेन्सी से है जो भारतीय रूपयों में लिखी या अभिव्यक्त की गई है। किन्तु इसमें विशिष्ट बैंक नोट तथा विशिष्ट एक रूपये के नोट (जो रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 28A के अधीन निर्गमित है), सम्मिलित नहीं है। (धारा 2(q))

3.1.16 भारत के निवासी

(i) ठीक पहले वाले वित्तीय वर्ष से 182 दिन पहले भारत में रहता हो परन्तु ये लोग शामिल नहीं होंगे।

(अ) कोई व्यक्ति भारत से बाहर गया है या रहता है या कोई नौकरी, पेशा या व्यवसाय करता है और किसी अन्य उद्देश्य से गया हो पर लौटने का विचार न रखता हो।

(ब) बाहर से कोई व्यक्ति भारत में आकर, नौकरी, पेशा या व्यवसाय करता है या अन्य कार्य से आया है पर भारत में अनिश्चित काल तक रहने का विचार रखता है।

(ii) कोई व्यक्ति या संस्था जो भारत में समामेलित और पंजीकृत हो।

(iii) भारत से बाहर निवास करने वाले व्यक्ति के स्वामित्व में या नियंत्रित भारत में कोई कार्यालय या शाखा।

(iv) भारत के निवासी द्वारा स्वामित्व में या नियंत्रित भारत से बाहर कोई कार्यालय, एजेन्सी या शाखा।

3.1.17 भारत के बाहर का निवासी व्यक्ति :- से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो भारत का निवासी नहीं है।

3.1.18 भारत को लौटाना (Repatriate to India) – से आशय प्राय: विदेशी विनिमय को भारत में लाना और

(i) ऐसे विदेशी विनिमय को रूपये के बदले में भारत में किसी अधिकृत व्यक्ति को बेचना।

(ii) भारत में रिजर्व बैंक को सूचना के अन्तर्गत वसूल किया धन अधिकृत व्यक्ति के खाते में डालना है। इसमें वसूल किया हुआ वह धन भी शामिल है जो विदेशी विनिमय में किसी ऋण या देयता को चुकता करता है।

3.1.19 प्रतिभूति (Security) :- से आशय अंश, स्कन्ध, बाण्ड, ऋणपत्र सरकार प्रतिभूतियों से है जो पब्लिक डेट एक्ट 1944 में परिभाषित है। इसमें से बचत-पत्र भी आते हैं। जिनपर गवर्नमेंट सेविंग्ज सर्टिफिकेट एक्ट 1959 लागू होता है। इसमें प्रतिभूतियों के जमा सर्टिफिकेट और भारतीय यूनिट ट्रस्ट के यूनिट, म्यूचल फण्ड के प्रमाण-पत्र तथा अन्य प्रतिभूतियों के प्रमाण-पत्र भी आते हैं। परन्तु इसमें विनिमय-पत्र, प्रतिज्ञा-पत्र या रिजर्व बैंक द्वारा इस अधिनियम के उद्देश्यों के लिये अन्य अधिकार पत्र शामिल नहीं हैं।

3.1.20 हस्तान्तरण (Transfer) : में विक्रय क्रय विनिमय, रेहन, गिरवी, दान, कर्ज या किसी अन्य रूप में अधिकार, स्वरूप, कब्जा या कानूनी अधिकार सम्मिलित है।

3.1.21 सभापति (Chairperson) : इससे आशय पुनरावेदन न्यायाधिकरण के सभापति से है।

3.1.22 व्यक्ति (Person) : व्यक्ति में निम्नलिखित सम्मिलित हैं -

(i) एकांकी व्यक्ति

(ii) एक अविभाजित हिन्दू परिवार

(iii) एक कम्पनी

(iv) एक फर्म

(v) व्यक्तियों का एक संघ अथवा संस्था चाहे वह समामेलित हो अथवा नहीं।

(vi) प्रत्येक कृत्रिम न्यायिक व्यक्ति, जो उपर्युक्त में से किसी भी उपवर्ग में नहीं आता है।

(vii) कोई भी ऐजेन्सी अथवा शाखा जिसका नियन्त्रण ऐसे व्यक्तियों के हाथ में हो।

3.1.23 भारत के बाहर निवासी (Person Resident Outside India) -

भारत के बाहर निवासी से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो भारत में निवासी नहीं है।

3.1.24 रिजर्व बैंक (Reserve Bank)

इससे आशय रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम, 1934 की धारा 3(1) के अन्तर्गत गठित भारतीय रिजर्व बैंक से है।

3.1.25 सेवा (Service)

सेवा से आशय किसी भी प्रकार की सेवाओं से है जो किन्हीं भावी उपभोक्ताओं को उपलब्ध की जाती है तथा इनमें बैकिंग, वित्तीय, बीमा, चिकित्सा सहायता, कानूनी सहायता, पिट फण्ड, भूसंपदा, परिवहन, अभिक्रिया, विद्युतीय या अन्य ऊर्जा की आपूर्ति, भोजन या आवास अथवा दोनों, आवास निर्माण, मनोरंजन, मनोविनोद या सूचनाएँ तथा समाचार प्रदान करने से सम्बन्धित सुविधाओं का प्रावधान सम्मिलित है। किन्तु नि:शुल्क सेवाओं तथा व्यक्तिगत सेवा अनुबन्ध के अन्तर्गत उपलब्ध की जाने वाली सेवाओं को इसमें सम्मिलित नहीं किया जाता है।

3.2 विदेशी विनिमय का नियमन एवं प्रबन्ध
(Regulation and Management of Foreign Exchange)

फेमा में विदेशी विमिय के नियमन एवं प्रबन्ध के सम्बन्ध में निम्न प्रावधान है :-

(क) विदेशी विनिमय को धारित करना (Holding of Foreign Exchange) : यदि इस अधिनियम में कोई विपरीत व्यवस्था नहीं की गई हो तो भारत में निवासी कोई भी व्यक्ति विदेश में स्थित अचल सम्पत्ति, विदेशी विनिमय एवं विदेशी प्रतिभूति का अधिग्रहण धारण उन स्वामित्व अथवा हस्तान्तरण नहीं कर सकता है।

(ख) चालू खाते के लेन-देन– कोई भी व्यक्ति किसी भी अधिकृत व्यक्ति को या उससे विदेशी विनिमय को बेच सकता है अथवा आहरित (Draw) कर सकता है यदि ऐसा विक्रय या आहरण (Withdrawal) चालू खाते का लेन-देन है।

(ग) विदेशी विनिमय की वसूली (Realisation of Foreign Exchange) – यदि इस अधिनियम में कोई विपरीत प्रावधान नहीं किया गया है तो भारत के निवासी किसी व्यक्ति को विदेशी विनिमय देय अथवा प्रत्यावर्तन से अर्जित (Due or Accrued) हो जाने पर वह व्यक्ति रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित विधि एवं निर्धारित समय के भीतर उस राशि को वसूलने तथा उसका भारत के प्रत्यावर्तन करने हेतु सभी उचित कदम उठायेगा।

(घ) विदेशी अधिनियम आदि में व्यवहार करना – धारा 3 के अनुसार बिना रिजर्व बैंक की आज्ञा के या इस अधिनियम के नियमों के विशिष्ट प्रावधानों के अभाव में कोई व्यक्ति वे कार्य नहीं कर सकता।

(i) कोई व्यक्ति विदेशी विनिमय या विदेशी प्रतिभूति में किसी से न तो व्यवहार कर सकता है और न उसे हस्तान्तरित कर सकता है और जब तक कि वह अधिकृत व्यक्ति न हो।

(ii) कोई व्यक्ति किसी भी ढंग से भारत के बाहर के किसी निवासी को न तो धन की अदायगी कर सकता है। न उसके खाते में कोई धन डाल सकता है।

(iii) अधिकृत व्यक्ति के द्वारा के अतिरिक्त भारत से बाहर के निवासी के लिए किसी के द्वारा किसी भांति से धन प्राप्त नहीं किया जा सकता यदि व्यक्ति ऐसा धन प्राप्त करता है और उतना ही धन विदेश से भारत में आ जाता है तो अदायगी मान्य हो सकती है।

(iv) भारत से बाहरी कोई सम्पत्ति प्राप्त करने, निर्मित करने या हस्तान्तरित करने के उद्देश्य से भारत में कोई व्यक्ति किसी वित्तीय सौदे में शामिल नहीं हो सकता।

(ङ) पूँजी खाता व्यवहार (Capital Account Transaction) – धारा 6 के अनुसार पूँजी खाता व्यवहार के लिये कोई व्यक्ति विदेशी विनिमय अधिकृत व्यक्ति को बेच सकता है या उसे प्राप्त कर सकता है। फिर भी केन्द्रीय सरकार की राय से रिजर्व बैंक पूँजी खाता व्यवहार के किसी वर्ग या किन्हीं वर्गों को अनुमेय (Permissoble) घोषित कर सकता है तथा इसकी सीमा का भी निर्धारण कर सकता है। रिजर्व बैंक इससे सम्बन्धित कार्यवाहियों के सम्बन्ध में उन्हें रोकने, प्रतिबन्धित करने तथा नियमित करने के नियम बना सकता है।

(ट) कुछ मामलों में धन की वसूली और भारत भेजने से छूट :-

(i) रिवर्ज बैंक द्वारा निर्धारित सीमा के भीतर किसी व्यक्ति द्वारा विदेशी करेन्सी व विदेशी मुद्रा को अधिकार में रखना।

(ii) रिजर्व बैंक की सामान्य या विशेष आज्ञा के अधीन किसी व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा विदेशी करेन्सी खाता का रखना और उसका परिचालन।

(iii) रिजर्व बैंक की सामान्य या विशेष आज्ञा के अधीन किसी व्यक्ति द्वारा 8 जुलाई 1947 से पहले विदेशी विनिमय की प्राप्ति या उससे किसी आय का होना।

(iv) रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित सीमा के भीतर भारत के किसी निवासी द्वारा विदेशी विनिमय का रखना यदि ऐसा विदेशी विनिमय उसके वहाँ विरासत में मिला हो।

(v) नौकरी, व्यवसाय, व्यापार, पेशा, सेवाएँ, मानदेय, भेंट, वसीयत या विधि सम्मत साधनों द्वारा प्राप्त विदेशी विनिमय जो रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित सीमा के भीतर हो।

(vi) रिजर्व बैंक द्वारा विशेष रूप से स्पष्ट की गई किसी अन्य विनिमय की प्राप्ति।

3.3 अधिकृत व्यक्ति (Authorised Person) –

धारा 10 के अनुसार अधिकृत व्यक्ति की स्थिति इस प्रकार है –

अधिकृतीकरण (Authorisation)

रिजर्व बैंक को आवेदन पत्र देने पर वह किसी व्यक्ति को विदेशी विनिमय या विदेशी प्रतिभूतियों में व्यवहार करने के लिये मुद्रा परिवर्तन के लिये या समुद्री तट की बैंकिंग इकाई में व्यवहार करने के लिये अधिकृत कर सकता है। यह लिखित तथा उल्लेखित शर्तो के अनुसार होगा।

अधिकृतीकरण का खण्डन (Revocation of Authorisation)

निम्नांकित बातों से संतुष्ट होने पर रिजर्व बैंक किसी भी समय अधिकृतीकरण का खण्डन कर सकता है।

(क) जब ऐसा करना जनहित में हो या

(ख) जब अधिकृत व्यक्ति दी गई शर्तों के पालन में असफल रहा है या इस अधिनियम या अन्य नियमों के निर्देशें की अवहेलना का दोषी पाया है पर उसे अपनी स्थिति स्पष्ट करने का उचित अवसर दिये बिना उसको दिये गए अधिकार का खण्डन नहीं हो सकता।

दण्ड लगाना : यदि कोई अधिकृत व्यक्ति रिजर्व बैंक के निर्देशों का पालन नहीं करता तो रिजर्व बैंक उसे स्पष्टीकरण का अवसर देने के बाद 10,000 रु. तक का अर्थ दण्ड लगा सकता है। यदि उसकी ओर से यह अवहेलना लगातार हो रही है तो अतिरिक्त दण्ड 2000 रू. प्रतिदिन के हिसाब से लग सकता है।

अधिकृत व्यक्ति की जाँच करना– धारा 12 के अनुसार रिजर्व बैंक अपने किसी अधिकारी के द्वारा अधिकृत वित्त के व्यवसाय की जांच उसके किसी ब्यान की सत्यता की जाँच के लिये, उसके द्वारा न दी गई सूचनाओं की प्राप्ति के लिये या किसी आदेश, निर्देश या इस अधिनियम का पालन करने के लिये करा सकता है।

3.4 अधिकृत व्यक्ति के निरीक्षण कर रिजर्व बैंक का अधिकार (Power of Reserve Bank to Inspect Authorised Person)

1. रिजर्व बैंक किसी भी समय, अपने किसी भी अधिकारी के माध्यम से उसे लिखित रूप से अधिकृत करके, अधिकृत व्यक्ति के व्यवसाय का निम्न उद्देश्यों से निरीक्षण करवा सकता है।

(i) रिजर्व बैंक को प्रस्तुत किये गये प्रपत्र, सूचना अथवा अन्य विवरण के सही होने का सत्यापन करने हेतु।

(ii) किसी भी ऐसी सूचना या विवरण प्राप्त करने के लिये जिसे पूर्व में मांगे जाने पर अधिकृत व्यक्ति नहीं दे सका या तथा

(iii) इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान, नियम, विनिमय, निर्देश अथवा आदेश का पालन करने के लिये।

2. प्रत्येक अधिकृत व्यक्ति की ओर यदि उसके स्थान पर कोई कम्पनी या फर्म है तो उसके प्रत्येक संचालक, सांझेदार या अन्य अधिकारियों की जो भी स्थिति हो यह कर्त्तव्य होगा कि उपधारा (1) के अन्तर्गत निरीक्षण करने वाले अधिकारी के माँगने पर, निर्धारित समय के भीतर अधिकृत व्यक्ति या कम्पनी या फर्म से सम्बन्धित पुस्तकों, खातों एवं अन्य प्रपत्रों को, जिस विधि से सम्बन्धित अधिकारी निर्देश दे, उसे सुपुर्द करेंगे।

3.5 नियम का उल्लंघन और दण्ड (Contravention and Penalities)

1. **दण्ड (Penalities)** – (i) धारा 13 के अनुसार यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम, किसी नियम, आदेश या निर्देश का उल्लंघन करता है तो ऐसे उल्लंघन से जितना धन होता है तो निर्णयकर्ता के आदेशों से उससे तिगुने धन के दण्ड का भागी होगा।

(ii) यदि ऐसे धन का निर्धारण संभव न हो तो 2,00,000 रू. तक दण्ड का भागी होगा।

(iii) यदि ऐसा उल्लंघन जारी रहता है तो प्रतिदिन 5000 रू. का दण्ड दिया जा सकता है।

(iv) इसके अतिरिक्त ऐसे उल्लंघन से सम्बन्धित कोई करेन्सी, प्रतिभूति, कोई और धन या सम्पत्ति, केन्द्रीय सरकार जब्त कर सकती है।

(v) ऐसे व्यक्ति की विदेशी सम्पत्ति या धन या तो भारत में लाया जायेगा या निर्देशानुसार विदेशी में रोक लिया जाएगा।

2. निर्णयकर्ता अधिकारी के आदेशों के पालन सम्बन्धी नियम – धारा 14 के अनुसार

(i) **नागरिक कैद –** यदि कोई व्यक्ति दण्ड वाले धन को सूचना के 90 दिन के भीतर नहीं अदा करता तो वह नागरिक कैद में डाला जा सकता है।

(ii) **सम्पत्ति हा हस्तान्तरण –** ऐसी कैद की सजा तभी दी जा सकती है जब अर्थ-दण्ड में भाषा डालने के उद्देश्य से दोषी व्यक्ति ने बेईमानी से अपनी सम्पत्ति को हस्तान्तरित किया है, छिपाया है या कहीं हटा दिया है।

(iii) **दण्ड की मात्रा के अनुसार कैद –** यदि दण्ड की मात्रा 1 करोड़ रू. से अधिक है तो दोषी व्यक्ति 3 वर्ष तक नागरिक कैद में रह सकता है। अन्य मामलों में वह व्यक्ति 6 माह तक की कैद में रखा जा सकता है।

(iv) **नियम उल्लंघन को समाप्त करने का अधिकार –** धारा 15 के अनुसार दोषी व्यक्ति एक आवेदन पत्र दे सकता है और ऐसा आवेदन पत्र पाने के 180 दिन के भीतर केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्देशित डायरेक्टर एनफोर्समेंट और रिजर्व बैंक के अन्य अधिकारी संतुष्ट होने पर मामले को समाप्त कर सकते हैं।

3.6 निर्णय और अपील (A Judication and Appeal)

(i) **केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्ति :** किसी व्यक्ति द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर केन्द्रीय सरकार अपने अधिकारियों में से जितने वह उचित समझे, मामले की जांच के लिये निर्णयकर्त्ता अधिकारी नियुक्त कर सकती है।

(ii) **नागरिक न्यायालय का अधिकार :** प्रत्येक ऐसा निर्णयकर्ता अधिकारी नागरिक न्यायालय का अधिकार रखेगा।

(iii) **अपील :** अपील सम्बन्धी नियम निम्नांकित है :-

1. **नियुक्ति –** केन्द्रीय सरकार एक या अधिक विशेष डायरेक्टर निर्णयकर्ता अधिकारी के आदेश के विरुद्ध अपील के लिये नियुक्त कर सकती है। यह व्यक्ति भारतीय न्याय सेवा का सदस्य या उसके समकक्ष होना चाहिए।

2. **क्षेत्र निर्धारण–** केन्द्रीयसरकार ऐसे नियुक्त डायरेक्टरों के क्षेत्र व उन मामलों को निर्धारित कर देती है, जिस पर उन्हें विचार करना है।

3. **निर्धारित रूप व ढंग –** अपील निर्धारित रूप, ढंग और फीस के अनुसार होनी चाहिए।

4. **नागरिक न्यायालय का अधिकार –** सभी अधिनियमों के प्रावधानों की दृष्टि से विशेष डायरेक्टर नागरिक न्यायालय के समान अधिकार संपन्न होगा।

5. **केन्द्रीय सरकार अपील सुनने वाला न्यायाधिकरण –** विदेशी विनिमय मामलों के लिये केन्द्रीय सरकार अपील सुनने वाला न्यायाधिकरण होगी जो निर्णयकर्त्ता अधिकारी और विशेष डायरेक्टर के विरूद्ध अपील सुनेगी। यह अपील भी 45 दिन के भीतर होनी चाहिए। न्यायोचित आधार पर न्यायाधिकरण यह सीमा बढ़ा सकता है।

6. **अपील न्यायाधिकर2ण की संरचना –** अपील न्यायाधिकरण एक अध्यक्ष और केन्द्रीय सरकार जितने उचित समझती है, उसते सदस्य होंगे। यह खण्ड पीठ (Bench) में बँटा होगा जिसका निर्धारण व नियमन अध्यक्ष करेगा।

7. **सभापति, सदस्य एवं विशेष निदेशक की नियुक्ति हेत योग्यताएँ (Qualification for Appointment of Chairperson Member and Special Director (appeal)) :** इस सम्बन्ध में निम्न प्रावधान हैं :

   (i) एक व्यक्ति सभापति के रूप में नियुक्ति के योग्य तभी माना जाएगा जबकि वह किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रहा हो या है या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने की योग्यता रखता है।

   (ii) एक व्यक्ति सदस्य के रूप में नियुक्ति के योग्य तभी माना जाएगा जबकि वह जिला न्यायाधीश है अथवा रहा है या जिला न्यायाधीश की योग्यता रखता है।

   (iii) एक व्यक्ति विशेष निदेशक के रूप में नियुक्ति के योग्य तभी माना जायेगा जबकि –

      (अ) वह भारतीय विधि सेवा का सदस्य रहा हो तथा वह उस सेवा में प्रत्यक्ष श्रेणी के पद को धारित कर चुका हो अथवा

      (ब) वह भारतीय राजस्व सेवा का सदस्य रहा हो तथा वह भारत सरकार के संयुक्त सचिव के समकक्ष पद को धारित कर चुका हो।

8. **कार्य अवधि –** सभापति एवं प्रत्येक सदस्य अपना कार्य भार संभालने की तिथि से 5 वर्ष तक अपने पद पर बना रहेगा किन्तु कोई सभापति अथवा दूसरे सदस्य अपने पद पर बने नहीं रह सकेंगे।

   (i) सभापति की दशा में 65 वर्ष की आयु के बाद

   (ii) किसी दूसरे सदस्य की दशा में 62 वर्ष की आयु के बाद

9. **सेवा की शर्तें (Terms and Conditions of Service) –** सभापति, अन्य सदस्यों तथा विशेष निदेशक के वेतन, भत्ते तथा सेवा की अन्य शर्ते वे होंगी जो निर्धारित की जाएंगी। किन्तु उनके वेतन, भत्ते तथा सेवा की अन्य शर्तों में ऐसा किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जाएगा जिससे उनकी नियुक्ति के बाद वे अलाभकारी हो जाएं।

10. **रिक्त पद –** अस्थायी अनुपस्थिति की स्थिति को छोड़कर यदि सभापति अथवा सदस्य का पद रिक्त हो जाता है तो केन्द्र सरकार उस पद को भरने के लिये अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति करेगी और रिक्त पद भर जाने के बाद पुनरावेदन न्यायाधिकरण के समक्ष आगे की कार्यवाही जारी की जा सकेगी।

11. **त्यागपत्र एवं पद्‌युक्ति –** सभापति अथवा सदस्य केन्द्र सरकार के नाम के नाम सम्बोधित त्यागपत्र पर अपने हस्ताक्षर करके पद त्याग का नोटिस दे सकता है। किन्तु सभापति या सदस्य केन्द्र सरकार की अनुमति के बिना अपना कार्यभार नहीं छोड़ सकता तथा अपने पद पर बना रहेगा जब तक कि उसे नोटिस को तीन महीने पूरे नहीं होते अथवा उसका विधिवत् नियुक्त उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता अथवा उसका कार्यकाल समाप्त नहीं हो जाता, इनमें से जो भी सबसे पहले हो।

12. **पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक के लिये स्टॉफ (Staff of Appellate tribunal and Special Director (appeals)) –** केन्द्र सरकार पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक पुनरावेदन को उतने अधिकारी तथा कर्मचारी उपलब्ध करायेगी जितने वह उचित समझे।

    (i) पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक के कार्यालय के अधिकारी एवं कर्मचारी अपने कार्यों का निष्पादन सभापति तथा विशेष निदेशक के निर्देश में, जैसी भी स्थिति हो, करेंगे।

    (ii) पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के वेतन एवं भत्ते तथा अन्य सेवा शर्तें निर्धारित विधि के अनुरूप होंगी।

3.7 अपील न्यायाधिकरण सम्बन्धी नियम (धारा 21 से 24)

1. **अध्यक्ष –** कोई वही व्यक्ति न्यायाधिकरण का अध्यक्ष हो सकता है जो किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने की योग्यता रखता हो।

2. **सदस्य –** सदस्य वही हो सकता जो जिला जज होने की योग्यता रखता हो।

3. **सदस्य अध्यक्ष के रूप में (Member to act as Chairperson) –** मृत्यु, पदत्याग, अनुपस्थिति, बीमारी या अन्य कारणों से अध्यक्ष का स्थान खाली होने पर सबसे वरिष्ठ सदस्य अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा, जब तक कि नया अध्यक्ष न आ जाए।

4. **पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक की प्रक्रिया एवं अधिकार (Procedure and Powers of Appellate Tribunal and Special Director (Appeal)} –** पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 [Code of Civil procedure, 1908] – में निर्धारित प्रक्रिया का पालन करने के लिये बाध्य नहीं है। परन्तु वे प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों (Principles of National Justice) तथा इस अधिनियम के अन्य प्रावधानों से दिशा निर्देशित होंगे तथा अपनी प्रक्रिया का नियमन करने के अधिकारी होंगे।

    (i) पुनरावेदन न्यायाधिकरण तथा विशेष निदेशक को इस अधिनियम के अधीन अपने कार्यों के निष्पादन हेतु निम्नलिखित मामलों पर विचार करते समय वे सभी अधिकार होंगे जो नागरिक प्रक्रिया संहिता 1998 के अन्तर्गत एक दीवानी न्यायालय को प्राप्त होते हैं।

    (ii) किसी व्यक्ति को बुलाना, उपस्थिति होने के लिये बाध्य करना तथा शपथपूर्वक पूछताछ करना।

    (iii) शपथ पत्र साक्ष्य प्राप्त करना।

(iv) साक्षियों अथवा प्रलेखों की जाँच के लिये आदेश जारी करना।

(v) किसी दोषपूर्ण स्पष्टीकरण को रद्द करना अथवा एक पक्षीय (Ex-Parte) निर्णय करना।

3.8 लागू करने का निदेशालय (Directorate of Enforcement)

इस अधिनियम के उद्देश्यों के लिये केन्द्रीय सरकार एक निदेशक व कई अधिकारियों की नियुक्ति करेगी तथा एक निदेशालय स्थापित करेगी। इसके निदेशक व अन्य अधिकारियों को सहायक एनफॉर्समेंट डायरेक्टर के नीचे के पदों को भरने को अधिकृत करेगी। एनफोर्समेंट डायरेक्टर तथा अन्य अधिकारी नियम के उल्लंघन के मामलों की जाँच करेंगे। केन्द्रीय सरकार, केन्द्रीय, राज्य या रिजर्व बैंक के अधिकारियों को जांच के लिये अधिकृत कर सकती है।

3.9 विविध (Miscellaneous)

नियमों को बनाने की शक्ति

फेमा (FEMA) के प्रावधानों को ठीक प्रकार से लागू करने के लिये केन्द्रीय सरकार को नियम बनाने का अधिकार है जो संसद से भी पारित होना चाहिए।

फेरा की समाप्ति (Repeal of FERA) – 'फेरा समाप्त हो जायेगा और उसका स्थान फेमा (FEMA) ले लेगा। पर फेरा वाले मामले में उसके नियमों के तहत तय किये जायेंगे। 'फेरा' के अपील बोर्ड के मामले 'फेमा' के अपील न्यायाधिकरण में आ जायेंगे।

फेरा से फेमा (From FERA to FEMA) – कोई न्यायालय या न्यायिक अधिकारी 'फेमा' के लागू होने के दो वर्ष बाद 'फेरा' के किसी उल्लंघन पर कोई ध्यान नहीं देगा।

3.10 फेरा और फेमा में अन्तर (Difference between FERA and FEMA)

पीढ़ी (Generation) – 'फेमा' विदेशी विनिमय सौदों के नियन्त्रण के लिये पहला अधिनियम था परन्तु देश में वित्तीय एवं आर्थिक सुधारों के होने से 'फेमा' फेरा का विकसित रूप और अगली पीढ़ी है।

धाराओं की व्यवस्था (Scheme to Section) – फेरा में 81 धाराएँ हैं और फेमा में 491।

गिरफ्तारी (Arrest) 'फेरा' अधिनियम का पालन करने पर किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जा सकता है पर फेमा में नागरिक जेल में रोका जा सकता है।

उल्लंघन दोष को समाप्त करने का अधिकार (Power to Compound Contravention) – फेरा के अन्तर्गत नियम के उल्लंघन को समाप्त करने का अधिकारी नहीं है, पर फेमा के अन्तर्गत ऐसा करने का अधिकार है।

अर्थदण्ड (Penality) – फेरा के नियम के उल्लंघन होने पर प्रभावित धन का पांच गुना या 5000 रु. जो भी अधिक हो दण्ड हो सकता है। पर फेमा में इस प्रकार प्रभावित धन का तीन गुणा दण्ड होगा या ऐसा निश्चित न किये जाने की दशा में 2 लाख रूपये होगा और ऐसा उल्लंघन जारी रहने पर 5000 रु. प्रतिदिन के हिसाब से और दण्ड दिया जा सकता है।

नई परिभाषाएँ (New Definitions) – फेमा में कुछ नई परिभाषाएँ जैसे 'पूँजी खाता व्यवहार', 'चालू खाता व्यवहार', निर्यात या सेवाएँ आदि को शामिल किया गया है। ये 'फेरा' में नहीं है।

4. सारांश (Summary)

इस अधिनियम का नाम विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम, 1999/2000 है तथा यह संपूर्ण भारत में लागू होता है। यह उन सभी शाखाओं, कार्यालयों एवं ऐजेन्सियों पर भी लागू होगा जोकि भारत के बाहर है किन्तु भारत के निवासी के नियन्त्रण में है। यह अधिनियम इस तिथि से प्रभावित होगा जो तिथि केन्द्रीय सरकार द्वारा राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा निर्धारित की जायेगी। यह अधिनियम सरकार द्वारा विभिन्न तिथियों पर परिवर्तित भी किया जा सकता है। इस अधिनियम के मुख्य उद्देश्यों में एक उद्देश्य भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का सुव्यवस्थित विकास करना तथा उसे बनाये रखना तथा विदेशी विनिमय से सम्बन्धित कानून को सुदृढ़ करना तथा उसमें संशोधन करना है ताकि विदेशी व्यापार तथा भुगतान में सुविधा हो सके। यह अधिनियम महत्त्वपूर्ण शब्दावली को परिभाषित करता है जैसे अधिकृत व्यक्ति, प्रचलित मुद्रा, चालू खाता व्यवहार, विदेशी मुद्रा, विदेशी विनिमय, विदेशी प्रतिभूति आदि। विदेशी व्यापार के संचालन तथा नियन्त्रण से सभी महत्त्वपूर्ण प्रावधानों की व्याख्या इस अधिनियम के अनतर्गत की गई है। अधिकृत व्यक्ति की अवधारणा का विस्तृत उल्लेख इस अधिनियम के अन्तर्गत किया गया है। नियमों के उल्लंघन की दशा में दंड सम्बन्धी प्रावधानों को इसमें बताया गया है। इसी तरह से निर्णय तथा पुर्नविचार की जानकारी भी यह अधिनियम उपलब्ध करवाता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह अधिनियम विदेशी विनिमय के प्रबन्धन एवं नियन्त्रण की सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध करवाता है।

5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा - Dr. Ashok Sharma
2. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा - नौलखा
3. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा - Dr. S.M. Sukhal
4. व्यावसायिक नियमन की रूपरेखा - Dr. R.C. Chawla
5. Mercantile Law - Dr. B.K. Goyal
6. Mercantile Law - Dr. S.C. Aggarwal
7. Business Law - Rohini Aggarwal

6. नमूने के लिये प्रश्न (Sample Questions)

1. विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम के प्रमुख प्रावधानों को संक्षेप में समझाइये।
2. अधिकृत व्यक्ति कौन है तथा अधिकृत व्यक्ति के सम्बन्ध में क्या प्रावधान है? अधिकृत व्यक्ति को निर्देश देने अथवा इसका निरीक्षण करने सम्बन्धी रिजर्व बैंक के अधिकारों का वर्णन करें।
3. विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम (फेमा) 2000 के अधीन निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित कीजिए -

   (1) अधिकृत व्यक्ति, (2) पूँजी खाता व्यवहार, (3) चालू खाता व्यवहार, (4) प्रतिभूति, (5) सेवा।
4. भारत के निवासी व्यक्ति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. पुनरावेदन न्यायाधिकरण एवं विशेष निदेशक (पुनरावेदन) के अधिकार एवं प्रक्रिया पर टिप्पणी लिखिए।